TIGHT BINDING BOOK

UNIVERSAL LIBRARY
OU_186105
UNIVERSAL LIBRARY

OUP—23—4-4-69—5,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81 D87D Accession No. G.H191

Author दुलारेलाल

Title दुलारे, दोहावली, 1952.

This book should be returned on or before the date last marked below.

काव्य और आलोचना की उत्तमोत्तम पुस्तकें

(काव्य)	
परिमल	४)
हृदय का भार	१॥)
विप्लव और विहार	२)
मेघमाला	१), १॥)
पंछी	१)
रागिनी	१)
शारदीया	१॥)
धड़कन	२॥)
आँगन	२)
प्रांगण	२)
अपने गीत	१॥)
मन के गीत	१)
जीवन-रेखाएँ	१~), २)
ऊषा	॥=), ॥।=)
रक्त-रंजित काश्मीर	॥)
साहित्य-सागर (दो भाग)	६), ७॥)
साहित्य-पारिजात	४)

(आलोचना)	
मतिराम-ग्रंथावली (परिचय-भाग)	२), २॥।)
देव-सुधा	२), २॥।)
कवि-कुल-कंठाभरण	१॥)
बिहारी-सुधा	॥=)
छायावाद	२॥)
देव और बिहारी	४॥)
निरंकुशता-निदर्शन	१), १॥।)
नैषध-चरित-चर्चा	२)
सुकवि-संकीर्तन	१॥।)
पंत और पल्लव	१॥)
पृथ्वीराज-रासो के दो समय	२।)
बिहारी-दर्शन	५)
मान-मयंक	१।), २)
संक्षिप्त हिंदी-नवरत्न	२।), ३)
नवयुग-काव्य-विमर्श	२॥), ३।)
मिश्रबंधु-विनोद (४ भाग)	११।), १३।)

हिंदुस्थान-भर की हिंदी-पुस्तकें मिलने का पता—
गंगा-ग्रंथागार, ३६, गौतमबुद्ध-मार्ग, लखनऊ

गंगा-पुस्तकमाला का १२१वाँ पुष्प

दुलारे-दोहावली

[सर्वप्रथम देव-पुरस्कार-प्राप्त]

प्रणेता

श्रीदुलारेलाल

सखि, जीवन सतरंज-सम,
सावधान ह्वै खेलि ।
बस जय लहिबौ ध्यान धरि,
त्यागि सकल रँग-रेलि ।

मिलने का पता—

गंगा-ग्रंथागार
३६, गौतम बुद्ध-मार्ग
लखनऊ

नवम संस्करण] १९५२ [मूल्य २)

Sarvodaya Sahitya Mandir,
Kothi (Bus Stand) Hyderabad—(A.P.)

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

P. G. अन्य प्राप्ति-स्थान —
H1945

१. राष्ट्रीय प्रकाशन-मंडल, मछुआ-टोली, पटना
२. भारती-भाषा-भवन, चर्खेवालाँ, दिल्ली
३. प्रयाग-ग्रंथागार, ४०, क्रास्थवेट रोड, प्रयाग

नोट—इनके अलावा हमारी सब पुस्तकें हिंदुस्थान-भर के प्रधान बुकसेलरों के यहाँ मिलती हैं। जिन बुकसेलरों के यहाँ न मिलें, उनका नाम-पता हमें लिखें।

सर्वाधिकार प्रकाशक के अधीन

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ

-प्रेमोपहार-

अपनी सबसे प्रिय वस्तु

सबसे प्रिय दिवस

की

सबसे प्रिय घड़ी पर

सबसे प्रिय

कुसुम-करों

में

वसंत-पंचमी
(मध्याह्न)
१९९६

प्रमाण-पत्र

मैंने दो हजार मुद्रा २०००) वार्षिक का जो 'देव-पुरस्कार' स्थापित किया है, उसके नियमानुसार इस वर्ष ब्रजभाषा-काव्य के सर्वश्रेष्ठ नवीन ग्रंथ पर उक्त पुरस्कार मिलना था। मुझे इस प्रमाण-पत्र द्वारा यह घोषित करने में परम प्रसन्नता है कि इस वर्ष का पुरस्कार निर्णायकों द्वारा लखनऊ-निवासी श्रीयुत पंडित दुलारेलालजी को, उनके 'दुलारे-दोहावली'-नामक उत्तम ग्रंथ के कारण, समर्पित किया गया है।

मैं आशा करता हूँ कि उनके द्वारा हिंदी की और भी सराहनीय सेवाएँ हो सकेंगी। मैं उन्हें अपनी, ओरछा-राज्य एवं हिंदी-संसार की ओर से हार्दिक बधाई देता हूँ!

वीरसिंहदेव

टीकमगढ़, मध्य-भारत	हिज़ हाइनेस
वीर-वसंतोत्सव (संवत् १९९१)	श्रीसवाई महेंद्र महाराजा ओरछा
९ । २ । १९३५	सरामद-राज-हाय-बुँदेलखंड

वक्तव्य

[सप्तम संस्करण पर]

'दुलारे-दोहावली' का प्रथम संस्करण जब निकला था, तभी मैंने—कुछ डरते हुए—लिखा था कि यह 'सर्वोत्तम कोटि' की कविता है। 'डरते हुए' इसलिये कि 'पंडित' प्रायः हिंदी से अनभिज्ञ समझे जाते हैं। ऐसी दशा में हिंदी-संसार के दिग्गजों द्वारा गर्हित भाषा में लिखे हुए काव्य को सराहनीय ही नहीं, पर 'सर्वोत्तम' कह देना एक निरे पंडित के लिये परम दुस्साहस कहा जा सकता है।

पर आज यह जानकर हर्ष है कि हिंदी पढ़नेवालों ने इस 'दोहावली' को इतना अपनाया है कि इसका सातवाँ संस्करण निकल रहा है। इसी प्रसंग में फिर से इन दोहों पर दृष्टि-पात करने का अवसर मिला है। आज भी इनको पढ़ने से जो आनंद—ब्रह्मास्वाद-सहोदर—अनुभूत हो रहा है, सो पहले से भी अधिक है। यही प्रमाण इसके 'उत्तम काव्य' होने का है—

"क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति
तदेव रूपं रमणीयतायाः।"

और काव्य का लक्षण भी पंडितराजोक्त ही मनोरम है—"रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्"—"रमणीयता च लोको-

त्तरचमत्कारकारिता"। "लाभाल्लोभोऽभिजायते"—इन दोहों के तो ७ संस्करण हो गए। अब कवि और अधिक 'परिणत-प्रज्ञ' हो गए हैं। इस 'परिणता प्रज्ञा' के भी उद्गार अवश्य होते होंगे। आशा है, ये भी प्रकाशित होकर दृष्टिगोचर होंगे।

जॉर्ज-टाउन, प्रयाग
१। २। ४०

गंगानाथ झा

विज्ञप्ति

[प्रथम संस्करण पर]

हिंदी-संसार में महाकवि बिहारीलाल की कितनी ख्याति है, यह किसी हिंदी-भाषा के जानकार से छिपा नहीं। कितने ही विद्वान् समालोचकों का मत है कि वह हिंदी के सर्वश्रेष्ठ कलाकार हैं। उनके बाद आज तक किसी ने भी वैसा चमत्कार नहीं पैदा किया था, परंतु यह कलंक अब दूर होने को है। अभी कुछ ही विद्वान् ऐसी सम्मति रखते हैं कि सुधा-संपादक कविवर श्रीदुलारेलालजी के दोहे महाकवि बिहारीलाल के दोहों की टक्कर के होते हैं, और बाज़-बाज़ ख़ूबसूरती में बढ़ भी गए हैं; परंतु यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि अचिर भविष्य में, जब कविवर श्रीदुलारेलालजी भार्गव के भी कई सौ ऐसे ही दोहे प्रकाशित हो जायँगे, लोगों को उनकी श्रेष्ठता का लोहा मानना होगा। कहा जाता है, ब्रजभाषा में अब पहले की-सी कविता नहीं लिखी जाती, परंतु 'दुलारे-दोहावली' ने इस कथन को बिलकुल भ्रम साबित कर दिया है। हिंदी के वर्तमान कवियों और समालोचकों में जो अग्रगण्य माने जाते हैं, उनमें से कोई-कोई मुक्त कंठ से स्वीकार करते हैं कि कविवर श्रीदुलारेलाल वर्तमान समय में ब्रजभाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि

हैं, और उनकी दोहावली ब्रजभाषा-साहित्य की वर्तमान सर्वोत्तम कृति। इसकी ब्रजभाषा की कोमल-कांत पदावली, शृंगार और करुण-रस के कोमलतम मनोभावों की मंजुल, सजीव कल्पना-मूर्तियाँ, वीर-रस की ओजस्विनी सूक्तियाँ, देश-प्रेम का छलकता हुआ प्याला, शांत-रस की सुधा-धारा, रसानुकूल अलंकृत भाषा का मुहावरेदार प्रयोग और संक्षेप में कहने का अद्भुत कौशल आदि एक ही जगह देखकर जी प्रसन्न हो जाता है। निस्संदेह कविवर श्रीदुलारेलालजी ऐसी रचनाओं के लिये हम साहित्यिकों के धन्यवाद के पात्र हैं।

चैत्र कृष्ण १, १९९१ — सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

भूमिका

ब्रजभाषा में नवीन प्रगति

हर्ष का विषय है, भारतेंदु के बाद ब्रजभाषा पर जो आपत्ति के बादल छा गए थे, वे अब धीरे-धीरे हट रहे हैं। भारतेंदु के बाद हम ब्रजभाषा-साहित्य की रचना का ह्रास देखते हैं। यद्यपि उसमें पं० बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', राय देवीप्रसादजी 'पूर्ण', श्रीबालमुकुंद गुप्त, पं० श्रीधर पाठक, श्रीसत्यनारायण 'कविरत्न', पं० नाथूरामशंकर शर्मा 'शंकर', श्रीजगन्नाथदास 'रत्नाकर', श्रीसनेहीजी, पं० रामचंद्र शुक्ल, श्रीवियोगी हरि, स्व० श्रीअजमेरीजी, पं० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय, पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, प्रो० रामदासजी गौड़ आदि की उत्कृष्ट रचनाएँ हुईं अवश्य, पर पत्रकारों एवं खड़ी बोली के प्रचारकों ने संघटित आंदोलन करके ब्रजभाषा का विरोध किया, जिससे ब्रजभाषा दब-सी गई थी। पर हिंदी-साहित्य में श्रीदुलारेलालजी के सराहनीय प्रयत्न से, 'माधुरी' के निकलते ही, ब्रजभाषा की लता पुनः लहलहाने लगी। यद्यपि यह सत्य है कि अनेक विद्वान् ब्रजभाषा-सेवियों ने इधर भी ब्रजभाषा की श्री-वृद्धि करने में विशेष योग दिया है, पर श्रीदुलारेलालजी का प्रयत्न अनेक कारणों से इन सबकी अपेक्षा अधिक महत्त्व-पूर्ण रहा है। कारण, आप ब्रजभाषा-साहित्य के प्रचारक तथा प्रकाशक ही नहीं, श्रेष्ठ कलाकार भी हैं। साथ ही आप खड़ी बोली के भी वैसे ही समर्थक हैं। अतएव आप हिंदी-माता के ऐसे सपूत हैं, जो प्राचीन और नवीन, दोनो धाराओं के ज़बर्दस्त हिमायती और प्रचारक हैं। आप हिंदी के उन महानुभावों में से हैं, जो रात-दिन लगन के साथ राष्ट्र-भाषा हिंदी के उत्थान में सतत प्रयत्नशील रहते हैं।

कविवर श्रीदुलारेलाल

श्रीदुलारेलालजी का जन्म लखनऊ के सुप्रसिद्ध, सुप्रतिष्ठित, धनी नवलकिशोर-कुल के यशस्वी श्रीमान् प्यारेलालजी के यहाँ हुआ था। आप उनके ज्येष्ठ पुत्र हैं। आपका लालन-पालन उर्दू के अजेय दुर्ग लखनऊ में हुआ। जिस नवलकिशोर-प्रेस ने उर्दू-फ़ारसी की ४,००० पुस्तकें प्रकाशित की हैं, वहीं आपका बचपन बीता है। पर आपसे तो हिंदी की अक्षय सेवा का कार्य होना था। यद्यपि आपका परिवार उर्दू की ओर प्रभावित था, पर आपने अपने बालपन में ही अपना एक निश्चित मार्ग ग्रहण कर लिया था। आपकी माताजी तुलसी-कृत रामायण और पुराणों का नियमित रूप से पाठ किया करती थीं। इसलिये उनके हिंदी-प्रेम से प्रभावित होकर इनको हिंदी के प्रति बाल्यकाल में ही अनुराग हो गया था, और आप उनकी अनुपस्थिति में उनके ग्रंथ चुपचाप पढ़ा करते थे। यह हिंदी-प्रेम अवस्थानुसार धीरे-धीरे बढ़ता गया। आप स्कूल और कॉलेज में अध्यापकों द्वारा उच्च कोटि के प्रतिभाशाली विद्यार्थी समझे जाते थे। दर्जे में प्रथम आने के कारण आपको अनेक छात्रवृत्तियाँ (वज़ीफ़े) और स्वर्ण-पदक मिले। अँगरेज़ी में प्रांत-भर में प्रथम आने के कारण आपको नेसफ़ील्ड*-स्कॉलरशिप भी मिला। आपकी अँगरेज़ी इतनी अच्छी थी कि आपके शुभचिंतकों की इच्छा थी कि आप आई० सी० एस० पास करके गवर्नमेंट के ऊँचे-से-ऊँचे पद ग्रहण करें।

किशोरावस्था में पदार्पण करते ही आपका विवाह अजमेर के प्रसिद्ध रईस श्रीमान् फूलचंदजी जज की सुपुत्री श्रीगंगादेवी से हुआ। हमारे होनहार महाकवि को श्रीगंगादेवी के रूप में बाह्य और

---

*युक्तप्रांत में कभी यह शिक्षा-विभाग के डाइरेक्टर थे। इनकी लिखी अँगरेज़ी-व्याकरण प्रसिद्ध है।

आभ्यंतर सौंदर्य-निधि की प्राप्ति हुई थी। कहते हैं, इस स्वर्गीया देवी को जैसा अपार सौंदर्य मिला था, वैसा ही हृदय-सौंदर्य भी। ऐसा मणि-कांचन-संयोग बिरले ही पुण्यवान्, भाग्यशाली मनुष्य को प्राप्त होता है। इन देवी में अनेक गुणों के साथ-साथ हिंदी के अनन्य प्रेम का सबसे बड़ा गुण था। इस सत्संग को पाकर दुलारेलालजी की हिंदी-हित की कामना-बेलि दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ने लगी, और आपने अपने सोलहवें वर्ष में भार्गव-पत्रिका का संपादन-भार अपने कोमल कंधों पर ले लिया। आपके संपादन के पूर्व भार्गव-पत्रिका उर्दू में निकलती थी, पर आपके हाथ में आते ही वह राष्ट्र-भाषा हिंदी में निकलने लगी। उसमें हिंदी के अच्छे-अच्छे कवि और लेखक भी लेख देते थे।

दुर्दैव-वश दो ही तीन मास पति के साथ रहकर सौभाग्यवती श्रीगंगादेवी परलोक सिधारीं। इस आघात से दुलारेलालजी की जीवन-धारा में एक महत् परिवर्तन हो गया। नवलकिशोर-प्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष रायबहादुर श्रीमान् प्रयागनारायणजी भार्गव, जो आपके बाबा* होते थे, और भार्गव-परिवार में सबसे ज्येष्ठ थे, आपसे बड़ा स्नेह रखते थे। वह अपने परिवार का इनको उज्ज्वलतम रत्न समझते थे। उनकी भी इच्छा थी कि आप आई० सी० एस० पास करने के लिये विलायत जायँ, किंतु आपने सरकारी नौकरी करना बिलकुल पसंद नहीं किया, और अपनी प्राणेश्वरी पत्नी की इच्छा की पूर्ति के लिये हिंदी की महान् सेवा करने का बीड़ा उठाया। श्रीमती गंगादेवी अपना पांचभौतिक तन त्यागकर, पति की आत्मा में लीन होकर हिंदी का इतना भारी उपकार करेंगी, यह कौन

* आपके परबाबा श्रीमान् फूलचंदजी के श्रीमान् नवलकिशोरजी सी० आई० ई० छोटे भाई थे। सो नवलकिशोरजी के पुत्र श्रीमान् प्रयागनारायणजी आपके बाबा होते थे।

जानता था ? प्रेमी हृदय पर इस घटना का यह प्रभाव पड़ा कि दुलारेलालजी उसी समय से अविवाहित रहकर हिंदी-सेवा में निरत रहे। पत्नी के प्रति पति का ऐसा प्रगाढ़ प्रेम बीसवीं सदी में बहुत कम देखने में आता है। अगर वह आई० सी० एस्० होकर विलायत से लौटते, तो किसी ज़िले में पड़े दिन काटते, और हिंदी उनकी इस अमूल्य सेवा से वंचित ही रह जाती! अस्तु।

आपने अपनी सती-साध्वी धर्मपत्नी स्वर्गीया गंगादेवी के मरणोपरांत उनकी पुण्य स्मृति में, वसंत-पंचमी के दिन, 'गंगा-पुस्तक-माला' प्रारंभ की। इस माला का पहला पुष्प था माला के संपादक, संचालक और स्वामी श्रीदुलारेलालजी-रचित 'हृदय-तरंग'-नामक ग्रंथ। इसे आपने अपनी स्वर्गीया प्रिय पत्नी को समर्पित किया। इसके बाद तो फिर 'गंगा-पुस्तकमाला' में राष्ट्र-भाषा हिंदी का गौरव बढ़ानेवाली प्रत्येक विषय की श्रेष्ठ पुस्तकें निकलीं, जिनसे हिंदी-साहित्य की विशेष श्री-वृद्धि हुई है। इन सब पुस्तकों को आपने स्वयं ही घोर परिश्रम से संपादित करके सुंदरता से प्रकाशित किया है। इसी के साथ-साथ हिंदी के इस यशस्वी सपूत ने अपने प्रिय बालसखा और चचा श्रीविष्णुनारायणजी भार्गव के सहयोग से 'माधुरी' को निकालकर तथा उसका सुचारु रूप से संपादन करके हिंदी की गति-विधि ही बदल दी। उसी समय से हिंदी के मासिक साहित्य में अभूतपूर्व सुधार हुआ, जिसका भारी श्रेय श्रीदुलारेलालजी को है। 'माधुरी' को योग्य हाथों में सौंपने के बाद हिंदी के इस लाड़ले लाल ने 'सुधा'-पत्रिका को जन्म दिया। 'सुधा' का संपादन भी आपने अपने ही हाथों में रक्खा, और आज तक आप ही के हाथों में है। 'सुधा' हिंदी-संसार की प्रथम श्रेणी की पत्रिकाओं में अग्रगण्य रही है, और है। इसका संपादन उच्च कोटि का होता है। इन दोनो सर्वश्रेष्ठ पत्रि-काओं के संपादन में आप जहाँ प्राचीन, प्रतिष्ठित साहित्य-सेवियों का

सम्मान करते आए हैं, वहाँ नवीन, योग्य साहित्य-सेवियों को प्रबल प्रोत्साहन भी देते आए हैं। अनेक युवक-युवतियों को बढ़ावा दे-देकर आपने उनसे लेख और ग्रंथ लिखवाए हैं। इस प्रकार आपने जहाँ स्वयं हिंदी की सेवा की है, वहाँ दूसरों से भी हिंदी-सेवा का कार्य लिया है, सैकड़ों लेखक-लेखिकाओं को साहित्य-साधना का सुंदर मार्ग दिखाया है। इनके समान हिंदी-हितैषिता बिरले लोगों में ही मिलेगी, फिर इतनी सेवा तो दुर्लभ है।

यद्यपि आपने खड़ी बोली में भी सुंदर, रसीली, भाव-पूर्ण कविता की है, पर आपकी कविता प्रधानतया ब्रजभाषा में मुक्तकों के रूप में ही देखी गई है। अब आपकी कविता के विषय में कुछ लिखने के पूर्व मैं आपके संपादन तथा प्रकाशन-कार्य की प्रशंसा के विषय में कुछ अग्रगण्य विद्वानों की सम्मतियाँ उपस्थित करता हूँ—

सुप्रसिद्ध हिंदी-हितैषी डॉक्टर सर जॉर्ज ग्रियर्सन के० सी० एस्० आई०, पी-एच्० डी० महोदय—

"A new series of editions of Hindi classical works has lately been projected under the title of the Sukavi Madhuri Mala. The general editor of the series is Shri Dulareylal Bhargava well-known in Northern India as the Editor-in-Chief of the excellent Hindi Magazine, the Sudha. In this series he propose's to offer to the public critically prepared editions of the master pieces of Hindi Literature with careful and full commentaries.

The publisher and the general editor may be congratulated on beginning this series so auspicio-

usly and it is to be hoped that the other works to be included in it will reach the same standard of scholarship."

संस्कृत के प्रकांड विद्वान् प्रोफ़ेसर रामप्रतापजी शास्त्री (नागपुर-विश्वविद्यालय के संस्कृत-हिंदी-प्राकृत-पाली-विभाग के अध्यक्ष)—

"The Ganga Pustak Mala Karyalaya is one of the best publishing Institutions in India. It has played an important part in the evolution of modern Hindi Literature.

It has recently made tremendous progress under the effcient management of its young and energetic proprietor Mr. Dulareylal Bhargava, an acomplished poet, prose-writer and the Editor of the best Hindi Monthly 'Sudha'.

Mr. Dulareylal Bhargava has undoubtedly laid the Hindi-speaking world under a deep debt of gratitude by his selfless services and he will go down to posterity as the most successful publisher. He has revolutionised Hindi printing and publishing in so short a time."

आचार्य पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी—बहुत-सी महत्त्व-पूर्ण और मनोरंजक पुस्तकें प्रकाशित करके गंगा-पुस्तकमाला के मालिक हिंदी-साहित्य की अभिवृद्धि में विशेष सहायक हुए हैं। उनके पुस्तक-प्रकाशन का यह क्रम यदि इसी तरह चलता रहा, तो भविष्य में यह अभिवृद्धि अधिकाधिक वृद्धिंगत होती रहेगी।

सुप्रसिद्ध इतिहास-लेखक और कवि श्रीमान् 'मिश्रबंधु'—

आपसे हिंदी का जैसा उपकार हुआ और हो रहा है, वैसा भारतेंदु हरिश्चंद्र के पीछे केवल इने-गिने महानुभावों द्वारा हो सका है। हम आशा करते हैं कि आगे चलकर आप हिंदी का और भी विशेष हित-साधन कर सकेंगे।

छायावाद के श्रेष्ठ कवि पं० सूर्यकांतजी त्रिपाठी 'निराला'— श्रीदुलारेलालजी भार्गव ने हिंदी की जो सेवा की है, उसका मूल्य निर्द्धारित करना मेरी शक्ति से बिलकुल बाहर है। 'माधुरी' और 'सुधा' में बराबर आप नवीन लेखकों को प्रोत्साहित करते रहे हैं, कितनी ही महिला-लेखिकाएँ तैयारी कीं। यह क्रम हिंदी की किसी भी पत्रिका में नहीं रहा। इस प्रोत्साहन-कार्य में भार्गवजी का स्थान सबसे पहले है। लखनऊ-जैसे उर्दू के क़िले में इस तरह हिंदी का विशाल प्रासाद खड़ा कर देना कोई साधारण-सी बात नहीं थी। इसके लिये कितना परिश्रम तथा कितना अध्यवसाय चाहिए, यह मर्मज्ञ मनुष्य अच्छी ही तरह समझ लेंगे!

हिंदी के सर्वश्रेष्ठ गद्य-लेखक आचार्य चतुरसेनजी शास्त्री— भार्गवजी आधुनिक हिंदी के दुलारे-युग के प्रवर्तक, ब्रजभाषा के सर्व-श्रेष्ठ कवि, सफल संपादक, लोकप्रिय प्रकाशक तथा सुप्रसिद्ध मुद्रक हैं। आप देव-पुरस्कार के सर्वप्रथम विजेता हैं। गंगा-पुस्तकमाला, माधुरी, सुधा, गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस, गंगा-ग्रंथागार, गंगा-कैलेंडर-मैनु-फ़ैक्चरिंग-कंपनी आदि के संस्थापक हैं। गत कुछ वर्षों के अल्पकाल में ही आपने हिंदी की जैसी उन्नति कर दिखाई है, वह बेजोड़ है। आपके काव्य-ग्रंथ 'दुलारे-दोहावली' पर जितनी आलोचना-प्रत्या-लोचना हिंदी में हुई है, उतनी हिंदी के इतिहास में, इतने थोड़े समय में, किसी भी ग्रंथ पर नहीं हुई। यही कारण है कि थोड़े काल में ही उसके अनेक संस्करण हो चुके हैं। आप लखनऊ के सुप्रसिद्ध श्रीनवलकिशोर सी० आई० ई० के वंश के हैं, जिन्होंने

हिंदी-साहित्य की अनुपम सेवा करके और उसी की बदौलत एक करोड़ रुपया पैदा करके अपना जन्म धन्य और जीवन अमर कर लिया।

आप अनेक बार अनेक सभाओं और समाजों द्वारा निमंत्रित होकर सभापति का पद सुशोभित कर चुके हैं। संयुक्त प्रांतीय साहित्य-सम्मेलन के सप्तमाधिवेशन के सभापति के पद से आपने गुरुकुल कांगड़ी में जो भाषण किया था, वह महत्त्व-पूर्ण है। आपका सिंध-साहित्य-सम्मेलन का संभाषण भी हिंदी की हित-कामना से ओत-प्रोत एवं सुंदर हुआ है। ग्वालियर-हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर अखिल भारतीय हिंदी-कवि-सम्मेलन ने आपकी कविता पर मुग्ध होकर उपस्थित कवियों में आपको प्रथम पुरस्कार दिया, जिसे आपने स्वयं न लेकर पं० पद्मकांतजी मालवीय को, जिनका नंबर दूसरा था, दिलवा दिया। प्रयाग में, द्विवेदी-मेला के समय, हास-परिहास के रंगमंच पर, अनेक कटाक्षों के उत्तर में आपकी मीठी हास्यमयी रचना ने सब उपस्थित सज्जनों को प्रसन्न किया था। उससे प्रकट होता है कि आप समय पर, तुरत ही, मनोहर, चुटीली रचना करने में भी समर्थ हैं। हिंदू-विश्वविद्यालय, लखनऊ-विश्वविद्यालय आदि शिक्षा-संस्थाओं में भी कवि-सम्मेलन और वाद-विवादों में सभापति का भार वहन करते हुए आप विद्यार्थियों में हिंदी-प्रेम जाग्रत् करते रहे हैं। सप्तम संयुक्तप्रांतीय कवि-सम्मेलन के सभापति का पद भी आप मेरठ में सुशोभित कर चुके हैं। परसाल कलकत्ता पधारने पर वहाँ के साहित्य-सेवियों ने आपका अभिनंदन किया था। आप प्रकृति से पर्यटनशील हैं। कश्मीर, पंजाब, राजपूताना, सी० पी०, यू० पी०, बुंदेलखंड, मध्य-भारत आदि आपका ख़ूब घूमा हुआ है। इससे आपका अनुभव बहुत बढ़ा है, जो एक सुकवि के लिये अपेक्षित है। आप मिलनसार और प्रेमी सज्जन हैं।

आपके सामाजिक विचार अत्यंत उदार हैं। न तो आप प्राचीन भारतीय सभ्यता का सर्वथा नाश ही चाहते हैं, और न प्राचीनता की रूढ़ियों से जकड़े रहकर प्रगतिशील समय से सर्वथा पीछे रह जाना ही पसंद करते हैं। तात्पर्य यह कि आप प्राचीन और नवीन का ऐसा समन्वय चाहते हैं, जो विश्व-कल्याणकारी हो। आप विभिन्न विचार-प्रणालियों को मानव-जीवन के विकास के लिये श्रेयस्कर समझकर उन सबका आदर करते हैं। आप जाति-पाँति में विश्वास नहीं रखते। हिंदू-जाति के संगठन और स्वराज्य-प्राप्ति के लिये आप अंतरजातीय विवाह को आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य समझते हैं। आप सांप्रदायिकता से भी दूर रहते हैं। सुधा और गंगा-पुस्तकमाला के संपादन तथा प्रकाशन और गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस तथा गंगा-ग्रंथागार के संचालन से अवकाश मिलने पर, स्फूर्ति होने पर, आप काव्य की रचना भी करते आए हैं। आप थोड़ा, किंतु अच्छा लिखने की नीति के क़ायल हैं।

दुलारे दोहावली

कविवर पं० दुलारेलालजी भार्गव की इस श्रेष्ठ रचना 'दुलारे-दोहावली' में सब मिलाकर २०८ दोहे हैं। प्रारंभ में, प्रार्थना-शीर्षक में, आठ दोहे हैं। इसके बाद मुख्य ग्रंथ प्रारंभ होता है। इन दोहा-रत्नों को कवि ने यत्र-तत्र बिखेरकर रक्खा है।

'दुलारे-दोहावली' जिस रचना-प्रणाली पर लिखी गई है, उसके अनुसार यह साहित्य-शास्त्र की दृष्टि से एक 'कोष' है, जिसमें २०८ दोहा-रत्न यत्र-तत्र अपने ही आपमें पूर्ण रहकर अपनी कमनीय कांति प्रदर्शित कर रहे हैं। साहित्य-शास्त्र में विवेचकों ने ऐसे 'पद्य-रत्न' को 'मुक्तक' कहा है। पद्यात्मक काव्य के प्रधानतया दो भेद हैं— (१) प्रबंध-काव्य और (२) मुक्तक-काव्य।' प्रबंध-काव्य में कवि एक विस्तृत कथानक का आश्रय लेकर काव्य-रचना करने के लिये एक

विशाल क्षेत्र चुन लेता है। उसे काव्य-सामग्री को एक विस्तृत क्षेत्र में यथास्थान भर देने की पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। उसका काम अभिधा से निकल जाता है, और कथानक की रोचकता के कारण उसमें मनोरमता रहती है। मुक्तककार का क्षेत्र बहुत ही संकीर्ण रहता है, उसी में उसे अपना संपूर्ण कथानक ध्वनि से, गंभीर अर्थ-पूर्ण शब्दों में, झलकाना पड़ता है। जहाँ प्रबंध-काव्य में छंद शृंखला-संबद्ध रहने के कारण आगे-पीछे के पद्यों का सहारा लेकर अपनी रक्षा कर सकते हैं, वहाँ मुक्तक-छंद को स्वतंत्र रूप से एकाकी रहकर अपना गौरव पूर्ण प्रबंध के सामने स्थापित करना पड़ता है। इसीलिये खंड काव्य, महाकाव्य आदि लिखने की अपेक्षा मुक्तक लिखना महत्त्व-पूर्ण है।

यह सत्य है कि मुक्तक की रचना काव्य-कला-कुशलता का चरम आदर्श है। एक पूरे प्रबंध (ग्रंथ) में कवि को विस्तृत कथानक का आश्रय लेकर रस-स्थापना का जो कार्य करना पड़ता है, वही कार्य एक छोटे-से मुक्तक में कर दिखाना विलक्षण काव्य-रचना-सामर्थ्य की अपेक्षा रखता है। कथानक का विस्तृत वर्णन न करके अर्थात् उसका आश्रय न लेकर एक छोटे-से छंद में इतना रस भर देना कि रसिक अगली-पिछली कथा का आश्रय लिए विना ही उसके आस्वादन से तृप्त हो जाय, सचमुच में असाधारण प्रतिभा का काम है। एक ही स्वतंत्र पद्य में विभाव, अनुभाव और संचारी भावों से परिपूर्ण रस का सागर लहराना, एक संपूर्ण आख्यायिका को थोड़े-से ध्वन्यात्मक शब्दों में भर दिखाना, कथन-शैली में एक निराला बाँकपन—एक निराला चमत्कार पैदा करना, उपमान-उपमेयों द्वारा समान दृश्य दिखलाकर भाव-साधर्म्य अथवा भाव-वैधर्म्य के आलंकारिक वेष को सजाना और सबके ऊपर देश-काल-पात्र के अनुकूल, स्वाभाविक प्रवाहमयी, आलंकारिक और मुहावरेदार, अर्थमयी, नपी-तुली, भावानुकूल, प्रांजल भाषा का सहज-सुकुमार प्रयोग करना सचमुच भारी क्षमता

का काम है। मुक्तक की रचना प्रधानतया व्यंग्य-प्रधान उत्तम काव्य में होती है। मानव-स्वभाव का सूक्ष्मातिसूक्ष्म विश्लेषण करना और प्रकृति-पर्यवेक्षण एवं प्रकृति की अनुभूति के साथ गहन से-गहन निगूढ़ रहस्यों का उद्घाटन करना मुक्तकों की रचना का आदर्श होता है। विद्वद्वर पंडित पद्मसिंह शर्मा ने ठीक ही लिखा है—

"मुक्तक की रचना कविता-शक्ति की परा काष्ठा है। महाकाव्य, खंड काव्य या आख्यायिका आदि में यदि कथानक का क्रम अच्छी तरह बैठ गया, तो बात निभ जाती है। कथानक की मनोहरता पाठक का ध्यान कविता के गुण-दोष पर नहीं पड़ने देती। कथा-काव्य में हज़ार में दस-बीस पद्य भी मार्के के निकल आए, तो बहुत हैं। कथानक की सुंदर संघटना, वर्णन-शैली की मनोहरता और सरलता आदि के कारण कुल मिलाकर काव्य के अच्छेपन का प्रमाण-पत्र मिल जाता है। परंतु मुक्तक की रचना में कवि को गागर में सागर भरना पड़ता है। एक ही पद्य में अनेक भावों का समावेश और रस का सन्निवेश करके लोकोत्तर चमत्कार प्रकट करना पड़ता है।...इसके लिये कवि का सिद्ध सारस्वतीक और वश्यवाक् होना आवश्यक है। मुक्तक की रचना में कवि को रस की अक्षुण्णता पर पूरा ध्यान रखना पड़ता है, और यही कविता का प्राण है।"

(सतसई-संजीवन-भाष्य, भू० भा०)

यद्यपि यथार्थ में रसमय काव्य ही काव्य है, पर कुछ ऐसे काव्य भी लिखे जाते हैं, जो नीति एवं धर्म आदि के उपदेश को प्रधानतया प्रतिपादित करनेवाले होते हैं। इनमें बहुधा रस का अभाव रहता है, सुभाषित मात्र इनमें रहता है, जिसमें केवल वाग्वैदग्ध्य का चमत्कार होता है। मुक्तक भी इस पर बहुतायत से लिखे जाते हैं। ऐसे सूक्ति-प्रधान मुक्तकों की रचना नीति और धर्म आदि के उपदेश देने के उद्देश्य से की जाती है। इनमें भी कथन-शैली का बाँकपन और शब्द-चमत्कार

का समावेश होना आवश्यक होता है, क्योंकि इनके विना सूक्ति प्रधान उत्तम मुक्तक नहीं रचे जा सकते। रस को छोड़कर अन्य काव्यांगों का समुचित समावेश इनमें अत्यंत संक्षेप में करना पड़ता है।

काव्य की अभिव्यक्ति सर्वोत्कृष्टतया व्यंग्य में होती है, इसीलिये अनेक साहित्य-रीति-ग्रंथकार, महामति विवेचकों ने व्यंग्य-प्रधान काव्य को श्रेष्ठता दी है। बहुत-से आचार्य और आगे बढ़ गए हैं; रस की अभिव्यक्ति के लिये भी सबल होने के कारण ध्वनिमय व्यंग्य को काव्य की आत्मा घोषित किया है। इस प्रकार की रस-ध्वनि-पूर्ण काव्य-रचना करनेवाले ही महाकवि कहलाते हैं। यह व्यंग्य काव्य में ध्वनि से उसी प्रकार झलकता है, जिस प्रकार अंगना का लावण्य उसके सुंदर शरीर से। धुरंधर काव्य-मर्मज्ञ आनंदवर्द्धनाचार्य लिखते हैं—

प्रतीयमानं पुनरन्यदेव
वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीनाम्;
यत्तत्प्रसिद्धावयवातिरिक्तं
विभाति लावण्यमिवांगनासु। (ध्वन्यालोक १।४)

"महाकवियों की वाणी में वाच्य अर्थ के अतिरिक्त प्रतीयमान अर्थ एक ऐसी चमत्कारक वस्तु है, जो अंगना के अंग में हस्तपादादि प्रसिद्ध अवयवों के अतिरिक्त लावण्य की तरह चमकती है।"

दुलारे-दोहावली के मुक्तक

इस प्रकार के मुक्तक और वे भी रस, ध्वनि और भावानुगामिनी उत्कृष्ट काव्य-भाषा से युक्त, दुलारे-दोहावली में, यत्र-तत्र बिखरे हुए देख पड़ते हैं। यद्यपि ऐसा जान पड़ता है कि दोहावली में आदि से अंत तक कोई क्रम नहीं, क्योंकि प्रत्येक पद्य मुक्तक होने से स्वतंत्र है, फिर भी विषय-विचार की दृष्टि से दुलारे-दोहावली में क्रम है, जो ध्यान से देखने पर मालूम हो जायगा। दोहावली के ये दोहे भाषा और भाव की दृष्टि से परमोत्कृष्ट हुए हैं। 'सूक्ति' के दोहे भी

बड़े चुटीले और अनूठे काव्य के उदाहरण हैं। उनमें भी कथन-शैली के तीखेपन के साथ मधुर कसक-पूर्ण बाँकपन पाया जाता है। इस दोहावली को सूक्ष्म तथा गहन दृष्टि से देखने पर गागर में सागर दिखलाई पड़ने लगता है। इतने विषयों को, इतने थोड़े में, इतने अनूठे ढंग से, सरल काव्य में लिखना और उसमें भी ऐसा कुछ लिख जाना, जो बड़े-बड़े विद्वान् व्यक्ति भी न लिख सके थे, सचमुच असाधारण प्रतिभा का काम है। हमारे दोहावलीकार ने ऐसा ही किया है।

गागर में सागर

इस एक ही छोटे काव्य-कोष में इतना भर देना यह सिद्ध करता है कि इसके पूर्व रचयिता ने बहुत कुछ देखा-भाला है, और उसका हृदय असंख्य अनुभूतियों का आगार बन चुका है। इसमें कवि ने जिस विषय को उठाया है, उसका बड़ा ही सच्चा, अनुभूत, हृदयग्राही और भावमय चित्र, अत्यंत मनोरम, भावानुगामिनी भाषा में, उपस्थित कर दिया है। सजीव कल्पना-मूर्तियों द्वारा शाश्वत प्रकृति के अंतरंग और बहिरंग का रमणीय वर्णन साहित्य-शास्त्रानुमोदित उत्कृष्ट कवि-कौशल से करने में दुलारे-दोहावलीकार को अभिनंदनीय सफलता मिली है। विशुद्ध भारतीय भावनाओं को मानव-प्रकृति को ग्राह्य, विशद कलात्मक रीति से उपस्थित करने में कवि का कौशल देखते ही बन पड़ता है। इस काव्य-कोष में ऐसे-ऐसे अनमोल मुक्तक-रत्न हैं, जिनका मूल्य आँकना बड़े-बड़े जौहरियों का ही काम है। इसमें कवि का प्रकृति-पर्यवेक्षण और विशाल अनुभव स्पष्टतया परिलक्षित होता है।

दोहावली में काव्यांग

दुलारे-दोहावली में अनेक काव्यांगों के बहुत ही प्रकृष्ट और विशुद्ध उदाहरण पाए जाते हैं। यहाँ कुछ का उल्लेख करना अप्रा-

संगिक न होगा। निम्न-लिखित उदाहरणों से कवि का काव्य-रीति का मार्मिक ज्ञाता होना सूचित होता है। निम्न-लिखित उद्धरणों में लाक्षणिक पद्धति का मनोमोहक चमत्कार दर्शनीय है—

कलहांतरिता—

माह-नेह-नभ तें अली, टारि रोस कौ राहु—
पिय-मुख-चंद दिखाहु प्रिय, तिय-कुमुदिनि बिकसाहु।

वय-संधि—

देह देस लाग्यौ चढ़न इत जोबन-नरनाह,
मदन चपलई उत लई जनु दृग-दुरग-पनाह।

विरह-निवेदन—

झपकि रही, धीरें चलो; करौ दूरि तें प्यार,
पीर-दब्यौ दरकै न उर चुंबन ही के भार।

प्रवत्स्यत्पतिका—

तन-उपबन सहिहै कहा बिछुरन-झंझाबात,
उड़्यौ जात उर-तरु जबै चलिबे ही की बात?

आगतपतिका—

मुकता मुख अँसुआ भए, भयौ ताग उर-प्यार;
बरुनि-सुई तें गूँथि दृग देत हार उपहार।

व्यतिरेक—

दमकति दरपन-दरप दरि दीपसिखा-दुति देह;
वह दृढ़ इकदिसि दिपत, यह मृदु दस दिसनि, स-नेह।

असंगति—

लरैं नैन, पलकैं गिरैं, चित तरपैं दिन-रात,
उठै सूल उर, प्रीति-पुर अजब अनोखी बात!

उत्प्रेक्षा—

कढ़ि सर तें द्रुत दै गई दृगनि देह-दुति चौंध ;
बरसत बादर-बीच जनु गई बीजुरी कौंध ।

दोहावली में अलंकार

दुलारे-दोहावली में वैसे तो अनेक अलंकारों का वर्णन है, और खूब है; परंतु कविवर दुलारेलाल का पूर्ण कौशल रूपक-अलंकार के उत्कृष्ट वर्णनों में परिलक्षित होता है। स्मरण रहे, उपमा की अपेक्षा रूपक का निर्वाह कठिन होता है। इसमें भी परंपरित सावयव सम अभेद रूपक लिखना तो पूर्ण कवित्व-सामर्थ्य की अपेक्षा रखता है। प्रस्तुत दोहावली में कविवर ने सावयव सम अभेद रूपक-अलंकार की पूर्ण छटा अनेक दोहों में, बड़े ही कौशल से, छहराई है। किसी विषय को उठाकर, उसके उचित उपकरणों को सजाकर, वैसे ही भाव-साधर्म्य का दूसरा सावयव दृश्य उपस्थित कर उसमें आदि से अंत तक सम अभेद रूपक का निर्वाह कर ले जाना विलक्षण प्रतिभा, प्रबल कल्पना और व्यापक ज्ञान के साथ-साथ सरस अनुभूति का परिचायक है। अब तक रूपकों की अनुपम छटा के लिये बिहारी-सतसई की ही सर्वापेक्षा अधिक प्रसिद्धि और सम्मान है। पर दुलारे-दोहावली के उत्कृष्ट रूपकों की परंपरित सावयव सम अभेद रहने की काव्य-चातुरी देखकर अब विवश होकर यही कहना पड़ता है कि उत्कृष्ट रूपकों की दृष्टि से दुलारे-दोहावली के दोहे बिहारी-सतसई के दोहों का सफलता से मुक़ाबिला करते हैं। ऐसे दो-चार रूपक यहाँ देखिए—

हृदय कूप, मन रहट, सुधि-माल माल, रस राग,
बिरह बृषभ, बरहा नयन क्यों न सिंचै तन-बाग ?
नाह-नेह-नभ तें अली, टारि रोस कौ राहु—
पिय-मुख चंद दिखाहु प्रिय, तिय-कुमुदिनि बिकसाहु ।

चित चकमक पै चोट दै, चितवन-लोह चलाइ—
लगन-लाइ हिय-सूत में ललना गई लगाइ।
रही अछूतोद्धार-नद छुआछूत-तिय डूबि;
सास्त्रम कौ तिनकौ गहति क्रांति-भँवर सों ऊबि।
दंपति-हित-डोरी खरी परी चपल चित-डार,
चार चखन-पटरी अरी, झोंकनि झूलत मार।

भाषा

दुलारे-दोहावली की भाषा प्रौढ़ साहित्यिक ब्रजभाषा है। स्मरण रहे, प्राचीन काल ही से साहित्यिक ब्रजभाषा में अत्यंत प्रचलित फ़ारसी, बुंदेलखंडी, अवधी और संस्कृत के तत्सम शब्दों का थोड़ा-बहुत प्रयोग होता रहा है। ब्रजभाषा के किसी भी कवि की भाषा का बारीकी से अध्ययन करने पर उपर्युक्त बात का पता सहज ही चल सकता है। कुछ प्राचीन कवियों ने तो अनुप्रास और यमक के लिये भाषा को इतना तोड़ा-मरोड़ा है कि शब्दों के रूप ही विकृत हो गए हैं। यद्यपि दोहावलीकार ब्रजभाषा के निर्माता सूर, बिहारी आदि कवीश्वरों द्वारा अपनाए गए बुंदेलखंडी, अवधी और फ़ारसी के अत्यंत प्रचलित शब्दों का बहिष्कार करना अनुचित मानते हैं, पर उन्होंने प्रायः ब्रजभाषा के विशुद्ध रूप को ही अपनी रचना में अपनाया है। दूसरी प्रांतीय हिंदी-बोलियों अथवा फ़ारसी के शब्दों का आपने इने-गिने दस-पाँच स्थलों पर ही, जहाँ उचित समझा है, प्रयोग किया है। आपने अत्यंत प्रचलित अँगरेज़ी-शब्दों का भी दो-चार दोहों में प्रयोग किया है; परंतु ऐसे स्थलों में प्रयुक्त अँगरेज़ी-शब्द वे हैं, जिनके पर्यायवाची शब्द हिंदी में नहीं मिलते, और जिन्हें आज जनता भली भाँति समझती है। जैसे—

सासन-कृषि तें दूर दीन प्रजा-पंछी रहैं,
सासक-कृषकन कूर आर्डिनेंस-चंचौ रच्यौ।

इसमें आर्डिनेंस का प्रयोग ऐसा ही हुआ है।

एक और भी उदाहरण दर्शनीय है, जिसमें प्रचलित अँगरेज़ी-शब्दों के प्रयोग द्वारा कविवर श्रीदुलारेलाल ने 'भाषा-समक'-अलंकार रक्खा है—

सत-इस्पटिक जग-फ़ील्ड लै जीवन-हाकी खेलि;
वा अनंत के गोल में आतम-बालहिं मेलि।

दोहावली की भाषा में बोलचाल की स्वाभाविकता और ज़बाँदानी का चमत्कार सर्वत्र दर्शनीय है। पद-मैत्री का भी सौष्ठव है। अनुप्रास, श्लेष और यमक का बड़ा ही औचित्य-पूर्ण, रसानुकूल, सुंदर प्रयोग किया गया है। माधुर्य, प्रसाद और ओज की अनेक दोहों में निराली छटा आ गई है। यहाँ स्थानाभाव के कारण भाषा-सौंदर्य के विषय में अधिक न लिखकर मैं दोहावली के शब्दालंकारों की छटा की कुछ झलक दिखलाता हूँ—

अनुप्रास—

संतत सहज सुभाव सों सुजन सबै सनमानि—
सुधा-सार सींचत स्रवन सनी-सनेह सुबानि।
कियौ कोप चित-चोप सों, आई आनन ओप,
भयौ लोप पै मिलत चख, लियौ हियौ हित छोप।
स्याम-सुरँग-रँग-करन-कर रग-रग रँगत उदोत;
जग मग जगमग जगमगत, डग डगमग नहिं होत।
गुंजमिलंतन-गुंज-जुत हुतौ जितौ मारंज!
लुंज-पुंज सो कुंज लखि क्यों न होइ मन रंज?
नंद नंद सुख-कंद कौ मंद हँसत मुख-चंद,
नसत दंद-छलछंद-तम, जगत जगत आनंद।

यमक—

बस न हमारौ, बस करहु, बस न लेहु प्रिय लाज;
बसन देहु, ब्रज मैं हमैं बसन देहु ब्रजराज!
खरी साँकरी हित गली, बिरह-काँकरी छाइ—
अगम करी तापै अली, लाज करी बिठराइ।

श्लेष—

मन-कानन मैं धँसि कुटिल, काननचारी नैन—
मारत मति मृगि मृदुल, पै पोसत मृगपति-मैन!
सखी, दूरि राखौ सबै दूती - करम - कलाप;
मन कानन उपजत - बढ़त प्यार आप-ही-आप।

दोहावली की भाषा परिमार्जित, व्याकरण-विशुद्ध और शब्दा, लंकारों से सुसज्जित है। उसमें असमर्थ, विकृत तथा अप्रयुक्त शब्द नहीं हैं, एवं उसकी सबसे बड़ी विशेषता है समास में कहने की प्रणाली। अत्यंत संक्षेप में विशाल अर्थ भरने में दोहावलीकार ने प्रशंसनीय सफलता प्राप्त की है। इसे देखकर रहीम के इस दोहे का स्मरण हो आता है—

दीरघ दोहा अरथ के, आखर थोरे आहिं,
ज्यों 'रहीम' नट कुंडली सिमिटि, कूदि कढ़ि जाहिं।

दोहावली की विशेषता और उसका अंतरंग

दुलारे-दोहावली में हम ब्रजभाषा की कोमल-कांत पदावली में—भावानुगामिनी तथा काव्य-गुण-संपन्न भाषा में शृंगार और करुण-रस के कोमलतम मनोभावों की मंजुल, सजीव कल्पना-मूर्तियाँ, वीर-रस की ओजस्विनी युक्तियाँ, देश-प्रेम का छलकता हुआ प्याला, शांत-रस की सुधा-धारा और राष्ट्रीयता एवं नीति की चुटीली, ज़ोरदार सूक्तियाँ पाते हैं। इन सबका वर्णन कवि ने उत्कृष्टतया किया है। यद्यपि दोहावली के दोहों में अनेक विषयों एवं रसों का वर्णन है, पर

प्रधानता शृंगार-रस की है। शृंगार-रस की रचना में भी संयत प्रकृति के सुकवि ने निर्लज्जता-पूर्ण, उद्वेग-जनक वर्णन को छुआ तक नहीं। दुलारे-दोहावली के शृंगार-वर्णन के दोहे विशुद्ध रति-भाव के द्योतक हैं, जिनमें अनंग काम अशरीरी होकर ही आया है। यथार्थ में कविवर ने भावधारा-प्रधान साहित्य के मुख्य भाव प्रेम की अभिव्यंजना और अलौकिक सौंदर्य की ही अवतारणा अपने शृंगार-रस के दोहों में की है। आपने लौकिक अर्थात् नर-नारी-संबंधी और अलौकिक अर्थात् परमात्मा-संबंधी द्विविध शृंगार के संयोग-वियोगात्मक वर्णनों में प्रेम की प्रधानता रखकर अनुभावों का कलामय चमत्कार दिखलाया है। यही एक ऐसे कवि हैं, जो शृंगार-रस के अनेक सफल चित्र उपस्थित करने में उद्वेग को सर्वथा बचा गए हैं। इसके लिये कवि की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। आप कुलटा और गणिका तक के भावमय, काल्पनिक शब्द-चित्रों में उद्वेग का अभाव ही देखेंगे। ऐसे दो उदाहरण यहाँ देखिए—

कुलटा—

लंक लचाइ, नचाइ दग, पग उँचाइ, भरि चाइ,
सिर धरि गागरि, मगन, मग नागरि नाचति जाइ।

गणिका—

मृदु हँसि, पुनि-पुनि बोलि प्रिय, कै रूखो रुख बाम—
नेह उपै, पालै, हरै, लै बिधि - हरि - हर - काम।

दोहावलीकार ने रस-व्यंजना का वैभव अनुभावों और हावों की सरस योजना में प्रदर्शित किया है। कुछ उदाहरण लीजिए—

झपटि लरत, गिरि-गिरि परत, पुनि उठि-उठि गिरि जात;
लगनि - लरनि चख-भट चतुर करत परसपर घात।
ऊँच-जनम जन, जे हरैं नित नमि नमि पर-पीर;
गिरिवर तें ढरि - ढरि धरनि सींचत ज्यों नद - नीर।

भावों के घात-प्रतिघात का भी कविवर श्रीदुलारेलाल ने अनूठा वर्णन किया है। जैसे—

जीवन-धन - जय - चाह, धन कंकन - बंधन करति ;
उत तन रन - उतसाह, इत बिछुरन की पीर मन।
तिय उलही पिय - आगमन, बिलखी दुलही देखि ;
सुखनभ दुखधर-बीच छन भा-त्रिसंकु-गति लेखि।

संयोग-शृंगार के वर्णन में भी कवि ने रति-भाव की सरस अनुभूति की अभिव्यंजना को ही प्रधानता दी है। जैसे—

लेत - देत संदेस सब, सुनि न सकत कहु कोय ;
बिना तार कौ तार जनु कियौ दगनु तुम दोय।
बही जु आवन - बात में, मूँदि लिए दग लाल ;
नेह - गही उलही, रही मही - गड़ी - सी बाल।
दंपति - हित - डोरी खरी परी चपल चित - डार ,
चार चखन - पटरी अरी, झोंकनि झूलत मार।

दुलारे-दोहावली में प्रधानतया विप्रलंभ या वियोग-शृंगार का वर्णन पाया जाता है। कविवर ने इसमें भाव-व्यंजना या रस-व्यंजना के अतिरिक्त वस्तु-व्यंजना का भी आश्रय लिया है, परंतु इनकी वस्तु-व्यंजना औचित्य की सीमा का उल्लंघन करके खिलवाड़ के रूप में कहीं नहीं हुई है। इनके भावों में स्वाभाविक मृदुता और सरसता है। सहृदय भावुक कवि ने अन्यान्य कवीश्वरों के समान विरह के ताप को लेकर खिलवाड़ नहीं किया है, फिर भी इनका विरह-वर्णन बड़ा ही तीव्र और चुटीला है। यहाँ दो-चार उदाहरण देखिए—

कठिन बिरह ऐसी करी, आवति जबै नगीच—
फिरि फिरि जाति दसा लखे कर दग मीचति मीच।
नई लगन किय गेह, अली, लली के ललित तन;
सूखत जात अछेह, तरु ज्यौं अंबरबेलि सों।

तचत बिरह-रबि उर - उदधि, उठत सघन दुख-मेह,
नयन-गगन उमड़त घुमड़ि, बरसत सलिल अछेह।
धाय धरति नहिं अंग जो मुरछा-अली अयाम,
उमगि प्रान - पति - संग तो करतो प्रान पयान।
बिरह - सिंधु उमड़्यौ इतौ पिय - पयान - तूफ़ान,
बिथा बीचि - अवली अली, अथिर प्राम - जलजाम।
जोबन - उपबन खिलि, अली, लली लता मुरझाय!
ज्यों - ज्यों डूबे प्रेम - रस, त्यों - त्यों सूखति जाय।
धन-बिछुरन-छुन-कन भए मन कौं मन-मन-ढेरि;
अँसुवन - कन - मनकन रही प्रीति - सुमिरनी फेरि।

कविवर ने भक्ति-शृंगार के वर्णन को भी अपनी दोहावली में, उचित मात्रा में, अनूठे ढंग से, रक्खा है। यहाँ दो-एक उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

श्रीराधा - बाधाहरनि - नेहअगाधा - साथ—
निहचल नयन - निकुंज में नचौ निरंतर नाथ!
बस न हमारौ, बस करहु बस न लेहु प्रिय लाज;
बसन देहु, ब्रज मैं हमैं बसन देहु ब्रजराज!

श्रीकृष्ण-भक्ति की वैष्णव-संप्रदायों की इस सखी-भक्ति के अतिरिक्त आपने रहस्यवादियों की शृंगार-भक्ति के भी दोहे कहे हैं। कुछ दोहे यहाँ देखिए—

नीच मीच कौं मत कहै, जमि उर करै उदास;
अंतरंगिनी प्रिय अली पहुँचावति पिय - पास।
समय समुझि सुख - मिलन कौ, लहि मुख-चंद-उजास,
मंद - मंद मंदिर चली लाज-मुखी पिय - पास।
उर-धरकनि-धुनि माहिं सुनि पिय-पग-प्रतिधुनिकान—
नस-नस तें नैननि उमड़ि आए उतसुक प्रान।

चहूँ पास हेरत कहा करि-करि जाय प्रयास ?
जिय जाके साँची लगन, पिय वाके ही पास !

शांत-रस और भक्ति की सुधा-धारा भी कविवर ने अपने अनेक दोहों में अत्युत्कृष्टतया प्रवाहित करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। इस बात के प्रमाण-स्वरूप निम्न-लिखित दो-चार दोहे देखिए—

माया-नींद भुलाइकैं, जीवन-सपन-लिहाइ,
आतम-बोध बिहाइ तैं मैं-तैं ही बरराइ।
जगि-जगि, बुझि बुझि जगत में जुगुनू की गति होति ;
कब अनंत परकास सों जगिहै जीवन-जोति ?
दरसनीय सुनि देस वह, जहँ दुति-ही-दुति होइ,
हौं बौरौ हेरन गयो, बैठ्यौ निज दुति खोइ।

इसी म योग-वर्णन का यह दोहा भी दर्शनीय है—

इड़ा-गंग, पिंगला-जमुन सुखमन-सरसुति-संग—
मिलत उठति बहु अरथमय, अनुपम सबद-तरंग।

भक्ति-वर्णन के निम्न-लिखित दोहे भी देखिए, कैसे अनूठे हैं—

कब तैं, लै मन-ठीकरौ, खरौ भिखारी द्वार !
दरसन-दुति-कन दै हरौ मति तम तोम अपार।
अगम सिंधु जिमि सीप-उर मुकता करत निवास,
तिमिर-तोम तिमि हृदय बसि करि हृदयेस ! प्रकास।
ग्राह गहत गजराज की गरज गहत ब्रजराज—
भजे 'गरीबनिवाज' कौ बिरद बचावन-काज।
मंद नंद सुख-कंद कौ मंद हँसत मुख चंद,
नसत दंद-छलछंद तम, जगत जगत आनंद।

इस कवि ने चेतावनी के भी बड़े ही चुटीले और गंभीर दोहे कहे हैं—

जग-मद में तेरी परी देह - नाव मँझधार;
मन-मलाह जो बस करै, निहचै उतरै पार।
गई रात, साथी चले, भई दीप - दुति मंद,
जोबन-मदिरा पी छुक्यौ, अजहुँ चेति मतिमंद!
जोति-उघरनी तें अजहुँ खोलि कपट-पट द्रुत—
पंजर-पिंजर तें प्रभो, पंछी - प्रान उबारु।

कविवर दुलारेलाल ने अनेक दोहों में सजीव प्रतिमाओं की तस-बीरें खींच दी हैं, जैसे—

नई सिकारिन - नारि, चितवन - बंसी फेंकिकैं,
चट घूँघट पट डारि, चंचल चित-मख लै चली।
लंक लचाइ, नचाइ दृग, पग उँचाइ, भरि चाइ,
सिर धरि गागरि, मगन, मग नागरि नाचति जाइ।
बार बितयौ लखि, बार झुकि बार बिरह के बार—
बार-बार सोचति—"कितै कीन्हीं बार लबार?"
जोबन-बन-सुख-लीन मन-मृग दृग-सर बेधि जनु—
धन-ब्याधिनि परबीन बाँधति अलकन-पास में।

दोहावली में ऐसे दोहे बहुत हैं, जिनमें बातें इस प्रकार से कही गई हैं कि जी में बैठ जाती हैं। मन कहता है—वाह! ऐसे पाँच दोहे नीचे दिए जाते हैं—

पुर तें पलटे पीय की पर - तिय - प्रीतिहिं पेखि—
बिछुरन-दुख सों मिलन सुख दाहक भयौ बिसेखि।
बिरह - बिजोगिनि कौ करत सपन सजन संजोग,
है समाधि हू सों सरस नींद, न नींदन - जोग।
हौं सखि, सीसी आतसी, कहति साँच - ही - साँच;
बिरह-आँच खाई इती, तऊ न आई आँच!

सोवत कंत इकंत, चहुँ चितै रही मुख चाहि;
पै कपोल पै ललक लखि भजी लाज-अवगाहि।
धाय धरति उर-महिं अंग जो मुरछा अली अयान,
उमगि प्रान-पति-संग तौ करतो प्रान पयान।

वीर-रस की अभिव्यंजना में जो दोहे लिखे गए हैं, उनमें कवि को अपूर्व सफलता मिली है। यहाँ दो-चार दोहे देखिए—

करी करन अकरम करनि करि रन कवच-प्रदान;
हरन न करि अरि-प्रान निज करनि दिए निज प्रान।
दुष्ट दुसासन दलमल्यौ भीम भीमतम-भेस,
पाल्यौ प्रन, छाक्यौ रकत, बाँधे कृस्ना-केस।
दुष्ट दनुज-दल-दलन कौं धरे तीच्छन तरवार—
देश-शक्ति दुर्गावती दुर्गा कौ अवतार।
छुट्यो राज, रानी बिकी, सहत डमो-गृह दंद,
मृत सुत हू लखि प्रियहिं तैं कर माँगत हरिचंद!

इन दोहों में ओज और वीर-रस की अभिव्यंजना का हृदयहारी कौशल देखते ही बनता है!

नीति-वर्णन की सूक्तियों में भी दुलारे-दोहावली में अद्भुत चमत्कार आया है। देखिए—

संगत के अनुसार ही सबकौ बनत सुभाइ;
साँभर में जो कछु परै, मिरो नोंन ह्वै जाइ।
होत निरगुनी हू गुनी बसे गुनी के पास;
करत लुएँ खस सलिलमय सीतल, सुखद, सुबास।
नियमित नर निज काज-हित समय नियत करि लेय;
रजनी ही में गंध ज्यों रजनी-गंधा देय।
संतत सहज सुभाव सों सुजन सबै सनमानि—
सुधा-सरस सींचत स्रवन सनी-सनेह सुबानि।

सुखद समै संगी सबै, कठिन काल कोउ नाहिं;
मधु सोहैं उपबन सुमन, नहीं निदाघ दिखाहिं।
जुद्ध-मद्ध बल सों सबल कला दिखाई देति;
निरबल मकरिहु जाल बुनि सरप-दरप हरि लेति।

सौंदर्य-वर्णन में कवि ने मानुषी रूप और प्रकृति का श्लाघ्य वर्णन किया है। स्मरण रहे, कला में सौंदर्य प्रधान है। इसी से कवि सौंदर्य का वर्णन करता है। बाह्य प्रकृति के सौंदर्य का वर्णन संसार के संपूर्ण श्रेष्ठ कवि सदा से करते आए हैं। कविवर दुलारेलाल के ऐसे वर्णनों में जो श्रेष्ठता है, उसे सौंदर्य-प्रेमी पाठक निम्न-लिखित दोहों में पाएँगे। मानुषी रूप का वर्णन देखिए—

बिंब बिलोकन कौं कहा झमकि झुकति झर-तीर?
गोरी, तुव मुख-छबि निरखि होत बिकल, चल नीर!
चख झख तव दृग सर-सरस बूड़ी, बहुरि उतराय—
बंदी-छुटके में छुटकि अटकि जात निरुपाय।
झीने अंबर झलमलति उरजनि छबि छितराइ;
रजत-रजनि जुग चंद-दुति अंबर तें छिति छाइ।
मोह-मूरछा लाइ, करि चितवन-कान-प्रयोग,
छबि जादूगरनी करति बरबस बस चित-लोग।
कढ़ि सर तें द्रुत दै गई दृगनि देह-दुति चौंध;
बरसत बादर-बीच जनु गई बीजुरी कौंध।
स्मनी-रतननि हीर यह, यह साँचो ही सोर;
जेती दमकति देह-दुति, तेतौ हियौ कठोर!

प्राकृतिक वर्णनों में भी विलक्षण सौंदर्य के साथ कवि ने काल्पनिक भाव-सौंदर्य का अभिन्न मेल मिलाकर हृदयग्राही सौंदर्य की सृष्टि की है। स्मरण रहे, जन-साधारण की दृष्टि से कवि की दृष्टि कुछ विलक्षण होती है। शुभ्र-सलिला सरिता जन-साधारण की दृष्टि में

शुभ्र-सलिला सरिता-मात्र है, पर कवि की दृष्टि में उस शुभ्र-वसना सुंदरी का शरीर शृंगार की क्रीड़ा-भूमि है। निम्न-लिखित दोहों से पाठकों को कविवर दुलारेलाल के प्राकृतिक सौंदर्य-वर्णन की महत्ता भली भाँति विदित हो सकेगी। देखिए—

हिममय परबत पर परति दिनकर-प्रभा प्रभात;
प्रकृति-परी के उर परयौ हेम-हार लहरात।
नखत-मुकत आँगन गगन प्रकृति देति बिखराय,
बाल हंस चुपचाप चट दमक-चोंच चुगि जाय।
जनु जु रजनि-बिछुरन रहे पदुमिनि-आनन छाइ,
ओस-आँसु कन सो करन पोंछत रबि-पिय आइ।
दिन-नायक ज्यों-ज्यों बढ़त कर अनुराग पसारि,
त्यों-त्यों लजि सिमटति, हटति निसि-मनमारि निहारि।
लरिकाई-ऊषा दुरी, झलक्यौ जोबन-प्रात,
छई नई छबि-रबि-प्रभा बाल-प्रकृति के गात।
लखि जग-पंथी अति थकित, संझा बाँह पसारि—
तम-सरायँ में दै रही छाँइ छपा-भटियारि।
जटित सितारन-बृंद, अंबर अंगनि झलमलत;
चली जाति गति मंद, सजनि-रजनि मुख-चंद दुति।
चंचल अंचल छलछलति जिमि मुख छबि अवदात,
सित घन छनि-छनि झलमलति तिमि दिनमनि दुति प्रात।

हमें आश्चर्य होता है, जब हम देखते हैं कि इतने संकुचित स्थल में कविवर उपर्युक्त विषयों के सिवा देश-प्रेम और राष्ट्रीय भावों के वर्णनों की उपेक्षा न करके उनका उदात्त और समुज्ज्वल वर्णन कर सके हैं।

मातृभूमि-वंदना का निम्न-लिखित दोहा कवि के अगाध देश-प्रेम का साक्षी है—

मम तन तव रज-राज, तव तन मम रज-रज रमत ;
करि बिधि हरि-हर-काज सतत सृजहु, पालहु, हरहु ।

इसके सिवा राष्ट्रीय भावनाओं से परिपूर्ण निम्न-लिखित गंभीर दोहे तो सर्वथा अनूठे ही हैं। देखिए—

झर सम दीजै देस-हित झर-झर जीवन-दान ;
रुकि रुकि यों चरखा-सरिस दैबौ कहा सुजान !
गांधी-गुरु तें ग्यान लै, चरखा-अनहद-जोर—
भारत सबद-तरंग पै बहत मुकति की ओर ।
पर-राष्ट्रन-अरि-चोट तें धम-स्वतंत्रता-कोट—
तटकर-परकोटा बिकट राखत अगम, अगोट ।

कुछ अन्योक्तियाँ भी दर्शनीय हैं—

सुरस-सुगंध-बिकास-बिधि चतुर मधुप मधु-अंध ।
लीन्हौं पदुमिनि-प्रेम परि भलो ग्याँन कौ धंध !!
बसि ऊँचे कुट यों सुमन ! मन इतौए नाहिं ;
यह बिकास दिन द्वैक कौ, मिलिहै माटी माहिं ।
बात-झूलि रे फूल यों निज श्री-भूलि न फूलि,
काल कुटिल कौ कर निरखि, मिलन चहत तैं धूलि ।

राष्ट्र की प्रधान समस्या इस समय अछूतोद्धार और अस्पृश्यता-निवारण है। इसके विषय में सहृदय कलाकार कवि ने बड़ी ही ज़ोरदार सूक्तियाँ कही हैं। तीन दोहे यहाँ द्रष्टव्य हैं—

रही अछूतोद्धार-नद छुआछूत-तिय डूबि ;
सास्त्रन कौ तिनकौ गहति क्रांति-भँवर सों ऊबि ।
कलिजुग ही मैं मैं लखी अति अचरजमय बात—
होत पतित-पावन पतित, छुवत पतित जब गात ।
छुआछूत-नागिन-डसी परी जु जाति अचेत,
देत मंत्रना-मंत्र तें गांधी-गारुडि चेत

अनेक दोहों में वैज्ञानिक सिद्धांतों का भी बड़ा ही अनूठा समावेश किया गया है। ऐसे दोहे देखिए—

लहि पिय-रबि तें हित किरन बिकसित रह्यौ अमंद ;
आइ बीच अनरस-अवनि किय मलीन मुख-चंद।
हौं सखि, सीसी आतसी, कहति साँच-ही-साँच ;
बिरह-आँच खाई इती, तऊ न आई आँच !
तचत बिरह-रबि उर-उदधि, उठत सघन दुख-मेह,
नयन-गगन उमड़त घुमड़ि, बरसत सलिल अछेह।
नैन-आतसी काँच परि छबि-रबि-कर अवदात—
झुलसायौ उर-कागदहिं, उड़यौ साँस-सँग जात।
साजन सावन-सूर-सम और कछू देखैं न ;
तुव दृग-दुति-कर-निकर किय अंधबिंदुमय नैन।
एती गरमी देखिकै करि बरसा-अनुमान—
अली भली पिय पैं चली लली-दसा धरि ध्यान।
हृदय-सून तें असत-तम हरौ, करौ जो सून,
सून-भरम के हित झपटि झट आवेगौ सून।
हीय-दीय-हित-जोति लहि अग जग बासी स्याम !
दृग-दरपन बिंबित करहु निज छबि आठौं जाम।

भावोत्कृष्टता के विषय में पचासों दोहे हैं। यहाँ केवल कुछ दोहे स्थाली-पुलाक-न्याय से परिचय प्राप्त कराने के हेतु देता हूँ—

खरी दूबरी तिय करी बिरह निठुर, बरजोर,
चितवन चढ़ति पहार जनु जब चितवति मम ओर।
धाय धरति नहिं अंग जो मुरछा-अली अयान,
उमगि प्रान-पति-संग तो करतो प्रान पयान।
निठुर, नीच, नादान बिरह न छाँड़त संग छिन ;
सहृदय सजनि सुजान मीच, याहि लै जाहु किन ?

साम्यवाद के विषय में निम्न-लिखित दोहा पढ़कर कवि के व्यापक ज्ञान के साथ-साथ उसकी हार्दिक अनुभूति का भी पता चलता है। देखिए तो, समय की प्रगति की कैसी सुंदर, उदार छटा निम्न-लिखित दोहा-रत्न में झलक रही है—

काम, दाम, आराम कौ सुघर समतुवै होइ,
तौ सुरपुर की कलपना कबहुँ करै न कोइ।

विश्व-प्रेम पर भी आपके दोहे दर्शनीय हैं—

जाति-पाँति की भीति तौ प्रीति भवन में नाहिं,
एक एकता-छतहिं की छाँह मिलति सग काहिं।
ईसाई, हिंदू, जवन, ईसा, राम, रहीम,
बैबिल, बेद, कुरान में जगमग एक असीम।
एक जोति जग जगमगै जीव जीव के जीय;
बिजुरी बिजुरीघर-निकसि ज्यों जारति पुर-दीय।

इस तरह आप देखेंगे कि ब्रजभाषा के इस कवि ने नवीन और प्राचीन, सभी विषयों पर सफलता-पूर्वक क़लम चलाई है।

दोहावली का संक्षिप्त परिमाण

उपर्युक्त उद्धरणों से यह भली भाँति स्पष्ट हो जाता है कि काव्य का यह छोटा-सा, परंतु बहुमूल्य कोष अत्यंत गंभीर और श्रेष्ठ वर्णनों का आगार है। इसकी रचना करके श्रीदुलारेलालजी अमर हो गए हैं। जो सज्जन इसके परिमाण की लघुता की ओर देखकर इसे श्रेष्ठ आसन देने में आनाकानी करें, उन्हें साहित्य-संसार के इस तथ्य का स्मरण रखना चाहिए कि किसी रचना का आदर परिमाण से नहीं, किंतु काव्योत्कर्ष की दृष्टि से होता है। संस्कृत-साहित्य के विशाल भांडार में एक सौ मुक्तक-रत्नों के कोष अमरुक-शतक का आदर उसकी रचना के काल से आज तक होता आया है। बड़े-बड़े काव्य-मर्मज्ञ, समर्थ समालोचक और साहित्य-गुरु-गंभीर रीति-ग्रंथों

के प्रणेता उसे अत्यंत आदर देते आए हैं। अमरुक-शतक सहस्रों काव्य-प्रबंधों में सर्वोत्कृष्ट माना गया है। इसकी अपूर्वता पर मुग्ध होकर साहित्य-शास्त्र-निष्णात परीक्षकों ने यह घोषणा की है—

अमरुककवेरेकः श्लोकः प्रबन्धशतायते ।

ध्वन्यालोक-जैसे श्रेष्ठ रीति-ग्रंथ-रत्न के रचयिता उद्भट साहित्याचार्य श्रीआनंदवर्द्धन ने ध्वन्यालोक में मुक्तकों पर विचार करते हुए अमरुक-शतक के विषय में लिखा है—

मुक्तकेषु हि प्रबन्धेष्विव रसबन्धाभिनिवेशिनः कवयो दृश्यन्ते । यथा ह्यमरुकस्य कवेर्मुक्तकाः शृंगारस्यन्दिनः प्रबन्धायमानाः प्रसिद्धा एव ।

अर्थात् "एक संपूर्ण ग्रंथ (प्रबंध) में कवियों को रस-स्थापना का जो पूर्ण प्रबंध करना पड़ता है, वही एक मुक्तक में भी, जिस प्रकार अमरुक कवि के 'मुक्तक' शृंगार-रस का प्रवाह बहाने के कारण ग्रंथों (प्रबंधों) की समता प्राप्त करने में प्रसिद्ध हैं।"

जब केवल १०० मुक्तकों के कोष अमरुक-शतक को श्रेष्ठता और काव्योत्कर्षता के कारण इतना अधिक सम्मान प्रदान किया जा सकता है, तब कोई कारण नहीं कि दो सौ दोहों की दुलारे-दोहावली को, उत्कृष्ट रचना के कारण, समुचित सम्मान प्रदान न किया जाय। हम जानते हैं, संसार में ऐसे सज्जनों की संख्या बहुत ही थोड़ी है, जो दूसरों की उत्तम रचना को यथोचित आदर देने की उदारता से संपन्न होते हैं। हिंदी-साहित्य-सूर्य गोस्वामी तुलसीदासजी ने तो स्पष्ट ही कहा है—

ते नरवर थोरे जग माहीं,
जे पर-भनित सुनत हरषाहीं ।

फिर यह समय तो छिद्रान्वेषण-प्रधान कहा जा सकता है। इसमें किसी कवि को न्यायोचित सम्मान की आशा करना एक प्रकार से

दुराशा है। कविराज महाराजा भर्तृहरि ने अपने वैराग्य-शतक में ठीक ही कहा है—

बोद्धारो मत्सरग्रस्ताः प्रभवः स्मयदूषिताः ;

अबोधोपहताश्चान्ये जीर्णमङ्गे सुभाषितम्। (श्लोक २)

अर्थात्, "जो विद्वान् हैं, वे मत्सर-ग्रस्त हैं; जो धनवान् हैं, वे गर्व से दूषित हृदयवाले हैं; इनके सिवा जो और लोग हैं, वे अज्ञानी हैं, इसलिये सुभाषित (सूक्ति-प्रधान उत्तम काव्य) शरीर में ही जीर्ण-शीर्ण हो जाता है।"

भावापहरण

यहाँ प्रसंग-वश भावापहरण पर भी विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है, क्योंकि दुलारे-दोहावली के कुछ दोहे प्राचीन कवीश्वरों के भावों की छाया पर बनाए गए हैं। स्मरण रहे, अपने पूर्ववर्ती मनुष्यों के प्राप्त किए हुए ज्ञान से परवर्ती लोग लाभ उठाते आए हैं। यह संसार के आदि काल से होता आया है, और अंत तक होता जायगा। इसकी गति अबाध है। किसी भी क्षेत्र में यही सिद्धांत सर्वत्र दृष्टिगोचर होगा। संसार के प्रायः संपूर्ण धर्म और धर्माचार्यों के विषय में भी यही नियम लागू है। किसी एक धर्माचार्य ने सत्य के जिस सिद्धांत को खोज निकाला था, उसी का प्रतिपादन संपूर्ण धर्माचार्य करते आए हैं। अवश्य भाष्य में परिवर्तन हुए हैं, और यही बादवाले आचार्यों की मौलिकता कही जाती है।

कवि के संबंध में भी यही नियम लागू है। पूर्ववर्ती कवियों के भावों से परवर्ती कवि सदैव लाभ उठाते आए हैं। पर प्रथम श्रेणी के कलाकार कवि वे हैं, जो उस पूर्व-प्रसिद्ध भाव में कुछ नूतनता लाए हैं। ऐसे लोग भावापहरण के दोषी नहीं ठहराए जाते, क्योंकि जिस मैदान में पूर्ववर्ती ने अत्यंत प्रसिद्धि प्राप्त की हो, उसमें खम ठोककर उतरना और ऐसा बल—ऐसा कौशल—दिखलाना, जैसा

वह परम प्रसिद्ध व्यक्ति भी न दिखला सका हो, सचमुच बड़ा ही प्रशंसनीय और अभिनंदनीय है। ध्वन्यालोककार श्रीआनंदवर्द्धनाचार्य ने भावापहरण पर विचार करते हुए लिखा है—

यदपि तदपि रम्यं यत्र लोकस्य किञ्चित्
स्फुरितमिति मदीयं बुद्धिरभ्युजिहीते ;
अनुगतमपि पूर्वच्छायया वस्तु तादृक्
सुकविरुपनिबध्नन् निन्द्यतां नोपयाति ।

(ध्वन्या० ४, १६)

अर्थात्, "जिस कविता में सहृदय भावुक को कुछ नूतन चमत्कार सूझ पड़े, उसमें यदि पूर्ववर्ती कवि की छाया भी झलकती हो, तो उससे कोई हानि नहीं। इस प्रकार के काव्य का रचयिता कवि अपनी बंधच्छाया से पुराने भाव को नवीन स्वरूप देने के कारण निंदा का पात्र नहीं समझा जा सकता।"

यही पुनः लिख गए हैं—

दृष्टपूर्वा अपि ह्यर्थाः काव्ये रसपरिग्रहात् ;
सर्वे नवा इवाभान्ति मधुमास इव द्रुमाः ।

अर्थात्, "पेड़ वही पुराने होते हैं, पर वसंत अपने रस-संचार से उन्हें नवीन रूप प्रदान करके नया बना देता है। इसी प्रकार सुकवि अपनी प्रतिभा से पुराने काव्यार्थ में नवीन रस का संचार कर उन्हें विकासक वसंत के समान शोभामय और रमणीय बना देता है।"

इसी कारण संसार की संपूर्ण भाषाओं के महाकवियों की रचनाओं में पूर्ववर्ती कवियों की छाया पाई जाती है। कवि-कुल-कलाधर कालिदास, शेक्सपियर, तुलसीदास, सूरदास, बिहारी, ग़ालिब और रवींद्रनाथ आदि संपूर्ण कवीश्वरों की रचना में पूर्ववर्ती कवियों के भावों की छाया प्रचुर मात्रा में प्राप्त होती है। कविवर दुलारेलाल की दुलारे-दोहावली भी इस नियम का अपवाद नहीं। उनके भी कुछ

दोहे पूर्ववर्ती कवियों की रचनाओं के आधार पर लिखे गए हैं। पर यह बात अवश्य है कि ऐसे स्थलों में दुलारेलाल अपनी प्रतिभा के बल से नूतन चमत्कार उत्पन्न करके पूर्ववर्ती कवीश्वरों को बहुत पीछे छोड़ गए हैं, और इसी कारण वह अर्थापहरण या भावापहरण के दोषी नहीं ठहराए जा सकते। यह बात मैंने दुलारे-दोहावली की 'पीयूषतरंगिणी' व्याख्या में भली भाँति सिद्ध की है।

हाँ, एक बात यहाँ और कथनीय है। वह यह कि काव्य का आनंद सहृदय ही ले सकते हैं। जो सहृदय नहीं हैं, उनका किसी कविता को अच्छा या बुरा कहना उनकी धृष्टता-मात्र है। एक संस्कृत-कवि ने इसके विषय में यथार्थ ही लिखा है—

यत्सारस्वतवैभवं गुरुकृपापीयूषपाकोद्भवं
तल्लभ्यं कविनैव नैव हठतः पाठप्रतिष्ठाजुषाम्;
कासारे दिवसं वसन्नपि पयः पूरं परं पंकिलं
कुर्वाणः कमलाकरस्य लभते किं सौरभं सैरिभः।

अर्थात्, "गुरु-कृपा-रूप पीयूष-पाक से उत्पन्न वाणी (सरस्वती) के वैभव को कविजन ही प्राप्त कर सकते हैं, न कि वे प्रतिष्ठा-लोलुप, जो कविता का पाठ करके हठ-पूर्वक सम्मान चाहते हैं। सरोवर में सारे दिन पड़ा रहनेवाला और समग्र जल को कीचड़मय कर डालनेवाला भैंसा क्या कभी कमलों की सुंदर सुगंध प्राप्त कर सकता है?"

व्यंग्य-प्रधान रचना का गूढ़त्व और टीका

अब इतना निवेदन और करना है कि दुलारे-दोहावली की रचना प्रधानतया व्यंग्य-प्रधान उत्तम काव्य में हुई है, अतएव इसका पूरा आनंद मर्मज्ञ विद्वान् ही ले सकते हैं। व्यंग्य-प्रधान काव्य को भली भाँति हृदयंगम करने की जिनमें क्षमता नहीं, जो सहृदय काव्य-मर्मज्ञ नहीं, उन्हें इसका समझना कठिन होगा। इसी से ऐसे

उच्च कोटि के साहित्य-ग्रंथ का सटीक होना आवश्यक है। मैंने इस पर टीका और विस्तृत व्याख्या लिखी है, जो प्रकाशित होगी।

दोष-दर्शकों के प्रति

कुछ दोष-दर्शक सज्जन कदाचित यह कहेंगे कि मैंने दोहावली का अब तक गुण-गान ही किया है, उसके दोषों की ओर थोड़ा भी ध्यान नहीं दिया। इसके विषय में मेरा अपना मत तो यह है कि दुलारे-दोहावली का महत्त्व गुण-बाहुल्य में है, न कि दोष-शून्यता से। फिर दोष-दर्शी आलोचकों के मत से तो संसार में दोष-शून्य काव्य की रचना ही असंभव-सी है। वे तो कहते हैं—

ऐसौ कबित न जगत मैं, जामैं दूषन नाहिं।

अंतिम निवेदन

मैं अंतिम निवेदन में इतना तो अवश्य ही कहूँगा कि ब्रजभाषा में वैज्ञानिक साहित्य-शास्त्र के निर्दिष्ट किए हुए उत्कृष्ट कलात्मक ढंग से ऐसा कुछ लिख लेना, जो सदियों से संसार में अभूतपूर्व सम्मान प्राप्त किए हुए महान् कवीश्वरों की वाणी के समक्ष ठहर सके, सचमुच में बड़ी ही जोखट और प्रखर प्रतिभा का काम है, एवं सबल कल्पनापेक्षित है। इस रचना का स्थान-निर्णय करना भविष्य के हाथों में है, पर इतना तो निश्चित है कि श्रीदुलारेलालजी की यह कृति ब्रजभाषा-साहित्य की अमर रचना है। मेरी कामना तो यह है कि भार्गवजी ब्रजभाषा के भांडार को शीघ्र ही कोई उत्कृष्ट महाकाव्य देकर हिंदी-साहित्य की गौरव-वृद्धि करें।

आशा है, हिंदी-संसार अपने इस श्रेष्ठ कलाकार का समुचित समादर करेगा।

सागर (मध्यप्रदेश)
२८ । ७ । ३४

विनीत
लोकनाथ द्विवेदी सिलाकारी

विज्ञप्ति

[सप्तम संस्करण पर]

सर्व-साधारण को सुलभ करने के लिये ही यह छोटा-सा, पर सुंदर संस्करण, सस्ते मूल्य में, निकाला गया है। अनेक शिक्षा-संस्थाएँ दुलारे-दोहावली को अपने यहाँ कोर्स में रखना चाहती हैं, पर बृहदाकार सचित्र संस्करण का मूल्य विद्यार्थियों के लिये अधिक—२॥)—होने की उन्होंने शिकायत की। आशा है, अब इस संस्करण को अपने पाठ्य-क्रम में रखने में उन्हें दिक़्क़त न होगी। दुलारे-दोहावली का आठवाँ संस्करण मोटे काग़ज़ पर, रंगीन चित्रों से युक्त, छपेगा, और मूल्य भी वही २॥) होगा। आशा है, अपने सुबीते और शक्ति के अनुसार प्रत्येक हिंदी-प्रेमी दुलारे-दोहावली का सातवाँ या आठवाँ संस्करण मँगा लेंगे।

स्वनामधन्य, पूज्यपाद डॉक्टर गंगानाथ झा ने कवि की 'परिणता प्रज्ञा' के उद्‌गारों के संबंध में अपने वक्तव्य में अन्यत्र ध्यान दिलाया है। इसके संबंध में निवेदन है कि इधर ५ वर्ष के अच्छे-अच्छे ५० दोहे छाँटकर दोहावली के इस संस्करण में रक्खे गए हैं, और पिछले संस्करण से उतने ही दोहे निकाल दिए गए हैं। कुछ अन्य दोहों का भी संस्कार किया गया है। आकार-वृद्धि की ओर ध्यान न देकर दोहावली को श्रेष्ठतम बनाने का प्रयत्न किया गया है।

विनीत वक्तव्य

[ओरछा में, वीर-वसंतोत्सव के वक्त, दुलारे दोहावली पर देव-पुरस्कार प्राप्त कर लेने के पश्चात्, पुरस्कार-प्रदाता को, दोहावलीकार द्वारा दिया गया धन्यवाद]

भारतीय भूपालों में सर्वश्रेष्ठ, सहृदय हिंदी-हितैषी, काव्य-कला के कुशल पारखी, भारतीय भाषाओं की महारानी मंजु-मधुर व्रजबानी के परम प्रेमी, देव-पुरस्कार के प्रसिद्ध प्रदाता श्रीसवाई महेंद्र महाराजा श्रीवीरसिंह देव ओरछाधिपति की सेवा में—

धन्यवाद

मम कृति दोस भरी खरी, गिरी निरस जिय जोइ—
है उदारता रावरी, करी पुरस्कृत सोइ।

× × ×

मधु मिलन

सुधा*-जनक जुग-मधु-मिलन सुमन-खिलन मधु माहिं;
उर-उपबन में सुरस-कन सुख-सौरभ सरसाहिं।

× × ×

व्रजबानी

बर व्रजबानी-पदुमिनी प्राचि-ओरछा-ओर—
लखि तमहर प्रिय बीर-रबि खिली पाइ सुख-भोर।

*** ओरछाधिपति की ७॥ वर्ष की कन्या और उसी उम्र की सुधा-पत्रिका। सुधा पत्रिका के साथ साथ जन्म पाने के कारण महाराज ने भी अपनी कन्या रत्न का नाम सुधा रक्खा है। यह उनके हिंदी-प्रेम का ज्वलंत उदाहरण है।**

ब्रजबासी - घन - प्रगति घन देस - गगन - बिच छाइ—
दियौ दयालु महेंद्रजू जन - मन - मोर नचाइ।

× × ×

आलोचकों के प्रति

संतत मद हू तें अधिक पद कौ मद सरसाइ;
वाहि पाइ* बौराइ, पै याहि पाइ‡ बौराइ।

तो भी

जे पद - मद की छाकु छकि बोले अटपट बैन,
सोऊ सुजन कृपा करें, भरें नेह सों नैन।

× × ×

अंतिम प्रार्थना

नेह - नेह दै जो दियौ साहित - दियौ जगाइ,
सतत भऊयौई राखियौ, जगत जोति जगि जाइ।

श्रीमान् का प्रेम-पूर्वक प्रदत्त यह प्रसिद्ध पुरस्कार प्राप्त करके मैं अपने को गौरवान्वित समझता और इसके लिये श्रीमान् को सादर धन्यवाद देता हूँ। किंतु श्रीमान् को विदित ही है कि मेरा तो सर्वस्व ही सरस्वती माता पर न्यौछावर है। फिर यह सरस्वतीदेवी का प्रसाद तो ख़ास तौर पर उन्हीं को समर्पण होना चाहिए। अतएव मैं आज इस पुरस्कार को भी सहर्ष एक ऐसी शुभ साहित्यिक सेवा में लगाने को उद्यत हूँ, जिसकी आवश्यकता का अनुभव सुदीर्घ समय से सभी सहृदय साहित्यिक सज्जन—कृतविद्य कवि-कोविद कर रहे होंगे। श्रीमान् का दिया हुआ यह धन मैं श्रीमान् के ही नाम से—

---

* पाठांतर सेइ।

‡ पाठांतर लेइ।

वसंत-पंचमी* के शुभ दिन को अमर करने के लिये—नवीन और प्राचीन काव्य-पुस्तकों के प्रकाशन में लगाना चाहता हूँ। पुस्तक-रूप में इतनी ही संपत्ति मैं अपनी ओर से भी इसमें सम्मिलित करके एक पुस्तकमाला 'देव-सुकवि-सुधा' नाम से, ४,०००) के मूलधन से, प्रकाशित करूँगा। देव-पुरस्कार की रक़म से जो माला चलाई जाय, उसमें देव-शब्द संयुक्त होना तो ठीक है ही, सुधा-शब्द भी स्पष्ट कारणों से समीचीन है। आशा है, सहृदय साहित्य-संसार को भी यह नाम बहुत सार्थक—समुचित समझ पड़ेगा। अस्तु। इस पुस्तकावली का प्रबंध एक परिषद् द्वारा होगा, जिसमें अनेक सदस्य रहेंगे। इनका निर्वाचन बाद में हो जायगा। मेरी इच्छा है कि श्रीमान् सवाई महेंद्र महाराजा साहब स्वयं इसके सभापति रहें, और मैं मंत्री के रूप में सेवा करूँ। आशा है, श्रीमान् मेरी यह सांजलि सम-भ्यर्थना स्वीकार करके मुझे इस संपत्ति को इस शुभ कार्य में लगाने का आदेश देंगे। समिति को या मुझे अधिकार होगा कि किसी सुप्रसिद्ध साहित्यिक संस्था को यह सारी संपत्ति, जब समुचित समझे, समर्पित कर दे।

---

* वसंत-पंचमी के ही दिन मेरा जन्म हुआ, मेरी प्यारी गंगा पुस्तक-माला का और गंगा-फ़ाइनआर्ट प्रेस का जन्म भी उसी दिन हुआ, तथा वसंत-पंचमी को ही मैं उस स्वर्गीया आत्मा से भी एक किया गया था, जिसके नाम से मैं गंगा-पुस्तकमाला को गूँथ रहा हूँ।

प्रार्थना

[एक]

सुमिरौ वा बिघनेस कौ
तेज* - सदन मुख - सोम,
जासु रदन - दुति - किरन इक
हरति बिघन - तम - तोम।

बिघनेस = गणेशजी। तेज = (१) प्रभा, (२) ज्ञान। सोम = (१) चंद्रमा, (२) आकाश। रदन = दाँत। तम तोम = अंधकार-राशि।

---

* पाठांतर 'जोति'।

[दो]

बंदि बिनायक बिघन-अरि,
न छुन बिघन समुहाहिं;
कर-इंगित के करत ही
छुईमुई ह्वै जाहिं।

समुहाहिं=सामना करें। **कर**=(१) सूँड़, (२) हाथ। **इंगित करत ही**=इशारा करते ही। **छुईमुई**=लाजवंती-नाम की बेलि।

[तीन]

श्रीराधा - बाधाहरनि-
नेहअगाधा - साथ—
निहचल नैंन-निकुंज में
नचौ निरंतर नाथ!

निहचल=(१) अपलक, भावमय। (२) शांत, एकांत।

[चार]

गुंजहार गर, गुंजकर
बंसी कर हरि, लेहु;
उर-निकुंज गुंजाय, धर,
रोर-पुंज हरि लेहु।

गुंजहार=गुंजाओं की माला। **गर**=गले में। **गुंजकर बंसी**=[बाँस की बनी, पर] आनंदमयी मधुर ध्वनि करनेवाली मुरली। **धर**=धरा, जगत्। **रोर**=कोलाहल।

[पाँच]

नयनन रूप ललाम तुव,

बयनन तुव प्रिय नाम,

कानन सुर अभिराम तुव,

प्रानन तू बसु जाम।

बसु जाम = आठों पहर।

[छः]

जनम दियौ, पाल्यौ, तऊ

जन बिसरायौ नाथ!

पर्यौ पुहुप मसल्यौ मनौं

मधु ही के मृदु हाथ।

जन=सेवक। पुहुप=फूल। मसल्यौ=मसला हुआ, मीड़ा हुआ। मधु=वसंत। मृदु हाथ=मुलायम हाथ से।

[सात]

मम तन तव रज-राज,

तव तन मम रज-रज रमत;

करि बिधि-हरि-हर-काज

सतत सृजहु, पालहु, हरहु।

रज=(१) धूल, (२) रजोगुण, (३) ज्योति, प्रकाश। रमत=(१) अनुरक्त हो रहा है, (२) लीन हो जाता है, व्याप्त हो जाता है, ग़ायब हो जाता है। बिधि=ब्रह्मा। हरि=विष्णु। हर=महेश। सतत=सर्वदा।

नीरस हिय - तमकूप मम ;
दोष - तिमिर बिनसाय—
रस - प्रकास भारति, भरौ,
प्यासो मन छकि जाय।

तमकूप=अंधा कुआँ । दोष=काव्य-दोष । तिमिर=अंधकार । रस=(१) नवरस, (२) जल । प्रकास=(१) रोशनी, (२) ज्ञान । भारति=भारती, सरस्वती ।

प्रथम शतक

[१]

जोबन - बन - सुख - लीन
मन मृग दृग-सर बेधि जनु—
धन - ब्याधिनि परबीन
बाँधति अलकन - पास में।

धन=युवती, वधू। पास=जाल।

[२]

कोप कोकनद-अवलि अलि,
उर - सर लई लगाइ;
पै दिखाइ मुख - चंद पिय
दई ! दई कुम्हिलाइ।

यहाँ कोप से प्रणय-कोप का तात्पर्य है, जो मान-लीला-वश होता है; जैसे—'प्रणय-कोप मालावलि तोरी' (हरिवंश)।

[३]

द्रवि - द्रवि, दै-दै धीर नित

दियौ जु दुरदिन साथ;

आँस सुमन सो नाथ द

पहलैं करौं सनाथ।

द्रवि-द्रवि=पिघल-पिघलकर, दया द्रवित होकर। **धीर**=धैर्य, धीरज। **दुरदिन**=बुरे दिनों में, विरह में। जिन दिनों असमय में, ऋतु के विना, बादल छाए हों, और पानी बरसता हो, उन्हें भी दुर्दिन कहते हैं। **आँस**=आँसू। **सुमन**=(१) फूल, (२) सुंदर मन से, सुख-पूर्वक। **सनाथ**=(१) नाथ-सहित, (२) कृतकृत्य।

[४]

कठिन बिरह ऐसी करी,

आवति जबै नगीच—

फिरि-फिरि जाति दसा लखे

कर दृग* मीचति मीच।

फिरि-फिरि जाति=बार-बार लौट-लौट जाती है। **मीच**=मृत्यु।

* पाठांतर 'चख'।

[५]

झपकि रही, धीरें चलौ;

करौ दूरि तें प्यार,

पीर - दब्यौ दरकै न उर

चुंबन ही के भार।

पीर=पीड़ा।

[६]

मति - सजनी बरजी किती,

फिरति फिराए नाहिं,

नजर - नारि नाचति निलज

अँग - अँगनहिं माहिं।

मति-सजनी=मति-रूपिणी सखी। **बरजी**=रोकी। **अँग-अँगनहिं माहिं**=अंग-रूपी आँगन में।

[७]

जोबन - देस - प्रवेस करि

बुधजन हू बौरायँ;

चंचल चख चखचख चलति,

चित हित-गुन बँधि जायँ।

बौरायँ=मतवाले हो जाते हैं, विवेक त्याग बैठते हैं। **चख**=चक्षु, आँख। चखचख= तकरार, कहा-सुनी, झगड़ा। हित-गुन= प्रेम-डोर।

[८]

जनु आवत लखि तन-सदन

जोबन - कंत प्रबीन—

स्वागत सिसुता - धन करति

लै कुच - कुंभ नबीन

[९]

दमकति दरपन-दरप दरि
दीपसिखा - दुति देह ;
वह दृढ़ इकदिसि दिपत, यह
मृदु दस दिसनि, स-नेह ।

दरपन-दरप दरि = दर्पण का दर्प दलन करके । **दीपसिखा-दुति** = दीप-शिखा की प्रभावाली । **स-नेह** = (१) तेल-युक्त, चिकनी, (२) प्रेम-युक्त, प्रेम-भरी, सजीव ।

[१०]

नाह - नेह - नभ तें अली,
टारि रोस कौ राहु—
पिय-मुख-चंद दिखाहु प्रिय,
तिय-कुमुदिनि बिकसाहु ।

नाह-नेह नभ तें = प्रेम-पात्र के प्रेम-रूपी आकाश से । **रोस** = रिस, क्रोध । **बिकसाहु** = प्रफुल्लित करो ।

[११]

कबि - सुरबैद्यन - बीर-रस
साहित - सर सरसाय ;
न्हाय जठर भारत च्यवन
तुरत ज्वान ह्वै जाय ।

कबि सुरबैद्यन = कवि-रूप अश्विनीकुमार । **जठर** = वृद्ध, जरठ । **भारत च्यवन** = भारत-रूपी, च्यवन ऋषि ।

[१२]

झर-सम दीजै देस-हित
झर - झर जीवन - दान ;
रुकि-रुकि यों चरसा-सरिस
दैबौ कहा सुजान !

झर = पानी का लगातार बरसना, झड़ी या झरना । **जीवन** = (१) ज़िंदगी, प्राण, (२) जल । **चरसा** = चरस । इस दोहे में देश-हित में ज़िंदगी या प्राण देने का ज़ोरदार भाव है ।

[१३]

प्रभा प्रभाकर देत जेहि
साम्राजहिं दिन - रात,
ताकों हतप्रभ - सो करत
श्रीगांधी - दृग - पात ।

प्रभा = प्रकाश । **प्रभाकर** = सूर्य । **साम्राजहिं** = साम्राज्य को ।

[१४]

हिममय परबत पर परति
दिनकर - प्रभा प्रभात,
प्रकृति - परी के उर परयौ
हेम - हार लहरात ।

प्रकृति-परी = प्रकृति-रूपिणी अप्सरा । **हेम-हार** = स्वर्णमाल ।

[१५]

ऊँच - जनम जन, जे हरैं
　　नित नमि - नमि पर - पीर ;
गिरिवर तें ढरि-ढरि धरनि
　　सींचत ज्यों नद-नीर।

नमि-नमि = झुक-झुककर। धरनि = ज़मीन पर।

[१६]

संतत सहज सुभाव सों
　　सुजन सबै सनमानि—
सुधा-सरस सींचत स्रवन
　　सनी - सनेह सुबानि।

[१७]

भाव-भाप भरि, कलपना-
　　कर मन-उदधि पसारि—
कबि-रबि मुख-घन तें जगहिं
　　नव रस देय सँवारि।

[१८]

इड़ा - गंग, पिंगला - जमुन
सुखमन - सरसुति - संग—
मिलत उठति बहु अरथमय,
अनुपम सबद - तरंग।

सुखमन=सुषुम्णा। इस दोहे में इड़ा, पिंगला और सुषुम्णा के मेल का गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम से मिलान किया गया है। **सबद-तरंग**=तरंगों से उठा हुआ शब्द और अनहद-नाद।

[१९]

काँटनि-कँकरिनि बरुनि चुनि,
अँसुवनि - कनि मग सींचि,
कसक - कराहनि हौं रह्यो
आहनि ही तोहिं ईंचि।

[२०]

कब तें, मन - भाजन लएँ,
खरौ तिहारे द्वार!
दरसन - दुति - कन दै हरौ
मति - तम - तोम अपार।

कन=(१) कण, (२) भिक्षा।

[२१]

देह-देस लाग्यौ चढ़न
इत जोबन - नरनाह,
पगन - चपलई उत लई
जनु दृग - दुरग - पनाह।

देह-देस=शरीर-रूपी देश पर। **पगन-चपलई**=पैरों की चंचलता ने। **दुरग**=दुर्ग, क़िला। **पनाह**=शरण।

[२२]

तचत बिरह-रवि उर-उदधि,
उठत सघन दुख - मेह,
नयन - गगन उमड़त घुमड़ि,
बरसत सलिल अछेह।

अछेह=(१) जिसमें छेह अर्थात् छोर और अंतर न हो, निरंतर। (२) अत्यंत, ज़्यादा।

[२३]

नेह - नीर - भरि-भरि नयन
उर पर ढरि - ढरि जात;
टूटि - टूटि तारक गगन
गिरि पर गिरि-गिरि जात।

तारक=तारे, नक्षत्र।

[२४]

नई सिकारिन - नारि,
चितवन - बंसी फेंकिकैं,
चट घूँघट - पट डारि,
चंचल चित-झख लै चली।

बंसी=मछली फँसाने का काँटा। घूँघट-पट=घूँघट-पट-रूपी वस्त्र। यहाँ 'पट' श्लिष्ट है। चित-झख=चित्त-रूपी मत्स्य।

[२५]

चीतत चिती जु चीत-पट
चल - चख - कूँची फेरि;
चटक मिटाए हू बढ़ति,
कढ़ति न चतुर चितेरि।

चीतत चिती=चित्र बनाती हुई चित्रित हो गई। चीत=(१) चित्त, (२) चित्र।

[२६]

चित-चकमक पै चोट दै,
चितवन - लोह चलाइ—
लगन-लाइ हिय - सूत मैं
ललना गई लगाइ।

लाइ=अग्नि।

[२७]

करत रहत संतत नयन
मोतियन कौ ब्यौपार;
फिरि-फिरि तुव सुधि आइ इत
लेति इन्हैं दे प्यार।

[२८]

मृदु हँसी, पुनि-पुनि बोलि प्रिय,
कै रूखो रुख बाम—
नेह उपै, पालै, हरै,
लै बिधि - हरि-हर - काम।

रूखो रुख = उपेक्षा का भाव। उपै = उत्पन्न करती है।

[२९]

पुर तें पलटे पीय की
पर - तिय - प्रीतिहिं पेखि—
बिछुरन-दुख सों मिलन-सुख
दाहक भयौ बिसेखि।

पुर तें पलटे = नगर से लौटे हुए। पेखि = देखकर। दाहक = जलाने-वाला। बिसेखि = विशेष करके।

[३०]

कढ़ि सर तें द्रुत दै गई
दृगनि देह - दुति चौंध ;
बरसत बादर - बीच जनु
गई बीजुरी कौंध ।

द्रुत = शीघ्र, जल्दी ।

[३१]

लखिकैं भारत - दीप कों
हतप्रभ - सौ असहाइ ;
दै नवजीवन - नेह निज
गंधी दियौ जगाइ ।

नवजीवन = (१) नवीन स्फूर्ति (२) महात्मा गांधी का नवजीवन-नामक पत्र । गंधी= (१) गांधीजी, (२) अत्तार ।

[३२]

बीर धीर सहि तीर - झर
कटक काटि कढ़ि* जात ;
बादल - दल बरसत बिकट,
बायुयान बढ़ि जात ।

* पाठांतर 'चमू चीरि चढ़ि' ।

[३३]

रही अछूतोद्धार - नद
छुआछूत - तिय डूबि :
सास्त्रन कौ तिनकौ गहति
कांति - भँवर सों ऊबि ।

[३४]

नखत - मुकत आँगन-गगन
प्रकृति दैवि बिखराय,
बाल हंस चुपचाप चट
चमक - चोंच चुगि जाय ।

नखत-मुकत = नक्षत्र-रूपी मोती । बाल हंस = (१) प्रातःकाल का सूर्य, (२) हंस का बच्चा ।

[३५]

सबै सुखन कौ सोत,
सतत निरोग सरीर है;
जगत - जलधि कौ पोत,
परमारथ - पथ - रथ यहै ।

सोत = स्रोत, चश्मा । जलधि = समुद्र । पोत = जहाज़ ।

[३६]

कला वहै, जो आन पै
आपुनि छाँड़ै छाप,
ज्यों गंधी के गेह में
गंध मिलति है आप।

आन पै = दूसरे पर। **आपुनि** = अपनी।

[३७]

जाति-पाँति की भीति तौ
प्रीति - भवन में नाहिं,
एक एकता - छतहिं की
छाँह मिलति सब काहिं।

भीति = भित्ति, दीवार।

[३८]

पुसकर - रज तें मन-मुकुर
पावत इतौ उजास,
होंन लगत बिंबित तुरत
सुचि, अनंत परकास।

पुसकर = पुष्कर - तीर्थ, जो अजमेर के पास है। यहाँ ब्रह्मा ने तप किया था। इसका माहात्म्य पद्म-पुराण और नारद-पुराण में गाया गया है।

[३९]

जग - तरनी में तन - तरी
परी अरी, मँझधार;
मन - मलाह जो बस करै,
निहचै उतरै पार।

निहचै=निश्चय-पूर्वक।

[४०]

माया - नींद भुलाइकैं,
जीवन - सपन - सिहाइ,
आतम - बोध बिहाइ तैं
मैं - तैं ही बरराइ।

सिहाइ=मुग्ध होकर। **बिहाइ**=त्यागकर।

[४१]

मनौ कहे - से देत,
नयन चवाई चपल है—
तिय - तन - बन - संकेत,
लरिकाईं - जोबन मिले।

चवाई=निंदक। **तिय-तन-बन-संकेत**=नारी-शरीर-रूपी वन के संकेत-स्थल में। **लरिकाईं-जोबन**=बाल्यावस्था और यौवन। इस दोहे में कवि ने बाल्यावस्था और यौवन को नायिका और नायक कथन कर उनका नारी-तन-रूप वन के संकेत-स्थल में मिलन कराया है, जिसकी चुग़ली खानेवाले चपल नेत्र हैं।

[४२]

तन - उपबन सहिहै कहा
बिछुरन - झंझाबात,
उड़यौ जात उर - तरु जबै
चलिबे ही की बात ?

तन-उपबन=शरीर-रूपी बाग़। **बात**=श्लिष्ट पद है। इससे बात (चर्चा)-रूपी वायु का तात्पर्य है।

[४३]

मुकता मुख - अँसुआ भए,
भयौ ताग उर - प्यार;
बरुनि - सुई तें गूँथि दृग
देत हार उपहार।

ताग=धागा।

[४४]

बीय दीय ज्यों-ज्यों बरे,
त्यों - त्यों घटे सनेह;
हीय - दीय ज्यों-ज्यों जरे,
त्यों - त्यों बढ़े सनेह।

बीय=दूसरा। दीय=दिया। **सनेह** = (१) घृत, (२) प्रेम।

[४५]

कैसें बचिहै लाज - तरु ?
रहौ निगोड़े नैंन !
पवा भई चहुँ दिसि चलति
चारि चवाइन - सैन।

निगोड़े = (१) पग-विहीन, (२) एक प्रकार की गाली।
पवा = चारो ओर से चलनेवाली हवा।

[४६]

कहा भयौ पिय कौं, कहत—
मो मुख मुकुर - उदोत ?
यह तौ मुख-छबि-कर लहत
आप सुदीपित होत !

[४७]

राखत दंपति - दीप कौं
दीपित साँच सनेह;
रहति आतमा - जोति तें
जगमग जैसें देह।

[४८]

लंक लचाइ, नचाइ दृग,
पग उँचाइ, भरि चाइ,
सिर धरि गागरि, मगन, मग
नागरि नाचति जाइ।

भरि चाइ=उमंग में भरकर।

[४९]

गंगा - जमुना - सरसुती,
बचपन - जोबन - रूप—
तिय-त्रिबेनि नहिं देति केहिं
मति-महि मुकति अनूप ?

मति-महि=मति-रूपी पृथ्वी से।

[५०]

बही जु आवन - बात में,
मूँदि लिए दृग लाल;
नेह - गही उलही, रही
मही - गड़ी - सी बाल।

आवन-बात=आने की बात-रूपी वायु में।

[५१]

सिव - गांधी दोई भए
बाँके माँ के लाल;
उन काटे हिंदून - दुख,
इन जग - दृग - तम - जाल।

सिव=शिवाजी। इस दोहे में शिवाजी और गांधीजी की तुलना की गई है।

[५२]

दुष्ट - दनुज - दल - दलन कों
धरे तीक्ष्ण तरवार—
देश - शक्ति दुर्गावती
दुर्गा कौ अवतार।

दुर्गावती=गढ़ामंडला की वीर नारी दुर्गावती, जिसने अकबर बादशाह के कड़ामानकपुर के सूबेदार आसफ़ख़ाँ से लोमहर्षण संग्राम किया था।

[५३]

हरिजन तें चाहौ भजन,
तौ हरि - भजन फजूल,
जन द्वारा ही होत नित
राजन - मिलन कबूल।

चाहौ भजन=भागना चाहो।

[५४]

जनु जु रजनि-बिछुरन रहे

पदुमिनि - आनन छाइ,

ओस - आँसु - कन सो करन

पोंछत रबि - पिय आइ।

पदुमिनि आनन=कमलिनी-रूपिणी पद्मिनी नायिका के मुख पर। **ओस-आँसु**=ओस-रूपी अश्रु। **करन**=किरण-रूपी हाथों से। **रवि-पिय**=सूर्य-रूप पति।

[५५]

नियमित नर निज काज-हित

समय नियत करि लेय;

रजनी ही में गंध ज्यों

रजनी - गंधा देय।

नियमित नर=नियमानुकूल चलनेवाला व्यवस्थित मनुष्य। **रजनी-गंधा**=वह वेलि, जिसके पुष्प रात्रि में ही सुगंध बिखेरते हैं।

[५६]

मानस - खस - टाटी सरस

हरि कलि - ग्रीसम - पीर—

त्रयतापन - लूअनि करति

त्रयबिध, सुखद समीर।

मानस=महाकवि तुलसी-कृत रामचरित-मानस। **त्रयतापन**=दैहिक, दैविक एवं भौतिक-नामक तीन तापों की। **त्रयबिध-सुखद समीर**=शीतल, मंद और सुगंध समीर, जो तन, मन, प्राणों को सुखद है।

[५७]

सीत - घाम - लू - दुख सहत,
तऊ न तोरत तार;
झरत निरंतर झर - सरिस,
सोइ सनेह सुचि, सार।

तऊ=तो भी। झर=झरना। सुचि=पवित्र।

[५८]

उर-धरकनि-धुनि माहिं सुनि
पिय-पग - प्रतिधुनि कान—
नस - नस तें नैनन उमहि
आए उतसुक प्रान।

उमहि आए=उमड़कर आए।

[५९]

सत-इसटिक जग-फील्ड लै
जीवन - हाकी खेलि;
वा अनंत के गोल मैं
आतम - बालहिं मेलि।

इसटिक=हॉकी खेलने का डंडा। फील्ड=मैदान। गोल=वह स्थान, जहाँ गेंद मेल देने से विजय प्राप्त होती है। बालहिं=गेंद को।

[६०]

ग्राह - गहत गजराज की
गरज गहत ब्रजराज—
भजे 'गरीबनिवाज' को
बिरद बचावन - काज।

[६१]

नई लगन किय गेह,
अली, लली के ललित तन ;
सूखत जात अछेह,
तरु ज्यों अंबरबेलि सों।

अछेह=लगातार। अंबरबेलि=आकाशवल्ली, अमरबेल।

[६२]

लेत - देत संदेस सब,
सुनि न सकत कछु कोय ;
बिना तार कौ तार जनु
कियौ दृगनु तुम दोय।

इस दोहे में नेत्रों द्वारा बेतार का तार बनाया गया है।

[६३]

नयौ नेह दै पिय ! दियौ
जीवन - दियौ जगाइ;
किंचित सिंचित राखियौ,
ह्वै सूनों न बुझाइ।

नेह=(१) प्रेम, (२) तेल। जीवन-दियौ=जीवन का दीपक।

[६४]

झपटि लरत, गिरि-गिरि परत,
पुनि उठि-उठि गिरि जात;
लगनि-लरनि चख-भट-चतुर
करत परसपर घात।

लगनि-लरनि=प्रेम-युद्ध में।

[६५]

अलि, चलि, थकि सुख-रैन में
जब जग सोवत मौन,
मम मन-मंदिर तब, सतत
करत कुलाहल कौन?

[६६]

चख-झख तव दृग-सर-सरस-

बूड़ि, बहुरि उतराय—

बेंदी - छुटके में छुटकि

अटकि जात निरुपाय।

छुटका=मछलियों के फँसाने का एक गड्ढा, जो दो जलाशयों के बीच तंग मेड़ पर खोदा जाता है। मछलियाँ एक जलाशय से दूसरे जलाशय में जाने के लिये कूदती और इसी गड्ढे में गिर जाती हैं। **छुटकि**=छूटकर। **निरुपाय**=लाचार।

[६७]

साजन सावन - सूर - सम

और कछू देखैं न;

तुव दृग-दुति-कर-निकर किय

अंधबिंदुमय नैन।

साजन=प्यारा, पति। **कर-निकर**=किरणों का समूह। **अंधबिंदु**=आँख के भीतरी पटल पर का वह स्थान, जो प्रकाश को ग्रहण नहीं करता, और जिसके सामने पड़ी हुई वस्तु दिखलाई नहीं देती।

[६८]

रमनी - रतननि हीर यह,

यह साँचो ही सोर;

जेती दमकति देह - दुति,

तेतौ हियौ कठोर!

हीर=हीरा।

[६९]

तिय उलही पिय - आगमन,
बिलखी दुलही देखि ;
सुखनभ-दुखधर - बीच छन
मन - त्रिसंकु - गति लेखि ।

तिय उलही = प्रसन्न हुई । **सुखनभ-दुखधर-बीच** = सुख-रूपी आकाश और दुःख-रूपी धरती के मध्य की । **मन-त्रिसंकु-गति**=मन की त्रिशंकु-जैसी गति । त्रिशंकु सूर्यवंश के वह पौराणिक नरेश, जिन्हें विश्वामित्र ने सदेह स्वर्ग पहुँचाने का प्रयत्न किया, और इंद्र ने पृथ्वी पर पटक दिया । शक्तियों के एक दूसरे के विरुद्ध प्रभाव से बेचारे बीच ही में लटक गए ।

[७०]

चख - तुरंग माते इते
छाके छबि की भाँग ;
सुमति - छाँद छाँदहुँ, तऊ
छिन - छिन भरत छलाँग ।

माते=मदोन्मत्त हो गए । **छाँद**=रस्सी से । **छाँदना**=सटाकर ऐसे पैर बाँधना कि दूर तक न भाग सके ।

[७१]

कलिजुग ही मैं मैं लखी
अति अचरजमय बात—
होत पतित - पावन पतित,
छुवत पतित जब गात ।

[७२]

गांधी - गुरु तें ग्याँन लै,

चरखा - अनहद - जोर—

भारत सबद् - तरंग पै

बहत मुकति की ओर।

भारत=(१) ज्ञान से रत, (२) भारत-देश। **मुकति**=(१) मोक्ष, (२) स्वाधीनता।

[७३]

जीवन - धन - जय - चाह,

धन कंकन - बंधन करति ;

उत तन रन - उतसाह,

इत बिछुरन की पीर मन।

धन=युवती, पत्नी, वधू।

[७४]

दिन - नायक ज्यों-ज्यों बढ़त

कर अनुराग पसारि,

त्यों-त्यों लजि सिमटति, हटति

निसि - नवनारि निहारि।

दिन-नायक=सूर्य-रूपी नायक। **बढ़त**=आकाश में ऊँचे चढ़ता है, आगे बढ़ता है। **कर**=(१) किरण, (२) हाथ। **पसारि**=फैला-कर। **निसि-नवनारि**=रात्रि-रूपिणी नव-बाला।

[७५]

होत निरगुनी हू गुनी
बसे गुनी के पास;
करत लुएँ खस सलिलमय
सीतल, सुखद, सुबास।

निरगुनी=गुण-हीन।

[७६]

जाति - जोंक भारत - रकत
संतत चूसत जाय,
अंतरजाति - बिबाह कौ
नोंन देहु छिरकाय।

[७७]

सुलभ सनेह न ब्याह सों,
सुलभ नेह सों ब्याह;
ब्याह किए पुनि नेह की
इकै नेह ही राह।

[७८]

अगम सिंधु जिमि सीप-उर
मुकता करत निवास,
तिमिर-तोम तिमि हृदय बसि
करि हृदयेस ! प्रकास।

[७९]

गई रात, साथी चले,
भई दीप - दुति मंद,
जोबन - मदिरा पी चुक्यौ,
अजहुँ चेति मति - मंद !

[८०]

जगि-जगि, बुझि-बुझि जगत में
जुगनू की गति होति ;
कब अनंत परकास सों
जगिहै जीवन - जोति ?

इस दोहे में अनंत ज्योति से संयोग प्राप्त करने को उत्सुक, पुनः-पुनः जन्म-मरणशील जीवात्मा की वेदना का वर्णन है।

[८१]

नव-तन-देसहिं जीति जनु
पटु जोबन - नृपराज—
निरमित किय कुच-कोट जुग
आपुनि रच्छा - काज।

[८२]

नैंन - आतसी काँच परि
छबि - रबि-कर अवदात—
झुलसायो उर - कागदहिं,
उड़्यौ साँस - सँग जात।

आतसी काँच=आतिशी शीशा। **अवदात**=श्वेत, सुंदर। **साँस**=(१) श्वास, (२) हवा।

[८३]

पलक पोंछि पग-धूरि हौं
डारी दोसन धूरि;
देह धूरि जाने करी,
लग्यौ उड़ावन धूरि।

डारी दोसन धूरि=दोषों को छुपाया—भुलाया। **देह धूरि करी**=शरीर को धूल में मिला दिया।

८४]

[८४]

बिंब बिलोकन कौं कहा
　　झमकि झुकति झर-तीर ?
भोरी, तुव मुख-छबि निरखि
　　होत बिकल, चल नीर !

भोरी = भोली ।

[८५]

मन - मानिक - कन देहु
　　बिरह - ताप - तापित तुरत,
मुरछित कंचन - देहु
　　जिला देहु पुनि, पुन लहौ ।

मानिक-कन = जिससे सुनार सोने पर जिला देते हैं । **बिरह-ताप** = वियोगाग्नि । **देहु** = शरीर । **जिला देहु** = (१) जिला दो, आबदार बना दो, (२) सजीव करो । **पुनि** = फिर । **पुन** = पुण्य ।

[८६]

हृदय कूप, मन रहँट, सुधि-
　　माल माल, रस राग,
बिरह बृषभ, बरहा नयन,
　　क्यों न सिंचै तन-बाग ?

सुधि = स्मृति । **माल** = घट-माला । **बरहा** = सिंचाई के लिये बनी हुई नाली ।

[८७

[८७]

नजर - तीर तें नैंन - पुर
रच्छित राखन - हेत—
जनु काजर-प्राचीर पिय—
तिय-तन - भू - पति—देत।

काजर-प्राचीर = काजल का परकोटा।

[८८]

उत उगलत ज्वालामुखी
जब दुरबचनन - आग,
उठत हृदय - भू - कंप इत,
ढहत सुदृढ़ गढ़ - राग।

[८९]

बस न हमारौ, बस करहु,
बस न लेहु प्रिय लाज;
बसन देहु, ब्रज मैं हमैं
बसन देहु ब्रजराज!

(देव कवि के कवित्त के आधार पर)

बस न = वश नहीं। बस करहु = (यह लीला) समाप्त करो।
बसन देहु = वस्त्र दे दो। बसन देहु = निवास करने दो।

[९०]

लरिकाईं - ऊषा दुरी,
झलक्यौ जोबन - प्रात,
छई नई छबि - रबि - प्रभा
बाल - प्रकृति के गात।

[९१]

भारत - सरहिं सरोजिनी
गांधी - पूरब - ओर—
तकि सोचति—'ह्वैहै कबै
प्रिय स्वराज - रबि - भोर ?'

सरोजिनी=श्लिष्ट पद है, जिससे भारत की प्रसिद्ध नेत्री श्रीसरोजिनी नायडू और कमलिनी दोनो का अर्थ निकलता है। **पूरब**=पूर्व-दिशा।

[९२]

भारत - भूधर तें ढरति
देस - प्रेम - जल - धार,
आर्डिनेंस - इसपंज लै
सोखन चह सरकार ❀ !

भूधर=पहाड़, पर्वत। **आर्डिनेंस-इसपंज**=आर्डिनेंस-रूपी स्पंज। स्पंज झावें की तरह का एक प्रकार का बहुत मुलायम और रेशेदार पदार्थ होता है, जिसमें बहुत-से छोटे-छोटे छेद होते हैं। इन्हीं छेदों से वह बहुत-सा पानी सोख लेता है, और जब दबाया जाता है, तब उसमें का सारा पानी बाहर निकल जाता है।

❀ पाठांतर 'सोखि रही सरकार !'

[९३]

पर - राष्ट्रन - अरि-चोट तें

धन - स्वतंत्रता - कोट—

तटकर - परकोटा बिकट

राखत अगम, अगोट।

धन-स्वतंत्रता-कोट=आर्थिक स्वातंत्र्य-रूपी क़िला। **तटकर-परकोटा**=बाहर से आनेवाले माल (आयात) पर राज्य द्वारा लगाया गया कर-रूप परकोटा। **अगोट राखत**=छिपा रखता है।

[९४]

दिनकर-पुट-बर-बरन लै,

कर - कूँचीन चलाइ,

प्रकृति - चितेरी रचति पटु

नभ - पटु साँझ सुभाइ।

दिनकर-पुट=सूर्य-रूपी गोल पात्र, जिसमें रंग भरा हुआ है। **बर-बरन**=श्रेष्ठ वर्ण या रंग। **कर-कूँचीन**=किरणों की कूँचियों को। **पटु**=प्रवीण। **नभ-पटु**=आकाश के पट पर। **सुभाइ**=(१) स्वभाव से, (२) उत्तम भाव से।

[९५]

सुखद समै संगी सबै,

कठिन काल कोउ नाहिं;

मधु सोहैं उपबन सुमन,

नहिं निदाघ दिखराहिं।

मधु=वसंत। **निदाघ**=ग्रीष्म।

[९६]

संगत के अनुसार ही
सबकौ बनत सुभाइ;
साँभर में जो कछु परै,
निरो नौंन ह्वै जाइ।

सुभाइ=स्वभाव। **साँभर**=राजपूताने की एक झील, जहाँ से साँभर-नामक नमक निकलता है। **नौंन**=लवण, नमक।

[९७]

सतसैया के दोहरा
चुनें जौंहरी-हीर—
जोति-धरे, तीछन, खरे,
अरथ-भरे गंभीर।

हीर=हीरा। **जोति**=(१) ज्ञान, (२) प्रभा, चमक। **तीछन** (**तीक्ष्ण**)=(१) तेज़, बुद्धि-युक्त, प्रतिभा-पूर्ण, (२) तेज़ नोकवाला। **खरे**=(१) विशुद्ध, (२) चोखे, बढ़िया। **अरथ** (**अर्थ**)=(१) व्यंग्यादि काव्यार्थ, (२) धन। **गंभीर**= (१) गहरा, (२) घना, प्रचुर।

[९८]

नीच मीच कौं मत कहै,
जनि उर करै उदास;
अंतरंगिनी प्रिय अली
पहुँचावति पिय-पास।

अंतरंगिनी प्रिय अली=अंतरंग-भेद जाननेवाली प्यारी सखी।

[९९]

जनम-मरन - करियन - जुरी
जीवन - लरी अपार—
नियति-नटी कसि, लसि रही*
रिझै रिझावनहार।

जनम-मरन-करियन-जुरी=जन्म-मरण की कड़ियों से जुड़ी। **जीवन-लरी अपार**=(१) अनंत जीवों की लड़ी, (२) अनंत जीवनों (योनियां) की लड़ी।

* पाठांतर 'प्रकृति-परी पहरति, लसति।'

[१००]

चख-खंजन परि किरकिरी
अंजन डारति धोइ;
अखिल निरंजन जो बसै,
क्यों न निरंजन होइ?

चख-खंजन=चपल नेत्र। **अंजन**=काजल। **निरंजन**=(१) अंजन-रहित, (२) दोष-रहित, माया-मोह-रहित, (३) स्वयं ईश्वर।

द्वितीय शतक

[१०१]

सुख-सँदेस के ज्वार चढ़ि
आई सखी सुजान,
लागी आनँद - सिंधु में
धन बूड़न - उतरान ।

[१०२]

उर-पुर अरि - परनारि तें
रच्छित राखौ लाल !
नतरु बियोग - कृसानु में
जौहर ह्वै है बाल ।

अरि-परनारि = शत्रु-रूपिणी अन्य नारी । **कृसानु** = अग्नि । **जौहर ह्वै है** = चिता प्रज्वलित कर जल मरेगी ।

[१०३]

मन-कानन में धँसि कुटिल,
काननचारी नैंन—
मारत मति-मृगि मृदुल, पैं
पोसत मृगपति - मैंन!

मन-कानन = मन-रूपी वन। **काममचारी नैंन** = (१) कानों तक फैले हुए नेत्र, (२) वन में विचरण करनेवाले अन्यायी (नय+न अर्थात् नय नहीं है जिनमें, ऐसे अन्यायी व्याध)। **मति-मृगि** = मति-रूपिणी मृगी। **मृगपति-मैंन** = कामदेव-रूपी सिंह।

[१०४]

कियौ कोप चित-चोप सों,
आई आनन ओप,
भयौ लोच पै मिलत चख,
लियौ हियौ हित छोप।

चोप = इच्छा, चाव। **ओप** = आभा। **छोप लियौ** = आच्छादित कर लिया।

[१०५]

छन-छन छबि की छाक सों
छलिया छैल ! छकाइ—
छँटे-छँटे अब फिरत क्यों
मोह - मूरछा छाइ ?

छाक = नशा। **छँटे-छँटे फिरना** = दूर-दूर रहना। कुछ संबंध या लगाव न रखना।

[१०६]

दंपति - हित - डोरी खरी
परी चपल चित्त - डार,
चार चखन - पटरी अरी,
झोंकनि झूलत मार।

मार=काम ।

[१०७]

बिरह - बिजोगिनि कौ करत
सपन सजन - संजोग,
सखि, समाधि हू सों सरस
नींद, न नींदन - जोग।

संजोग=मिलन । जोग = योग्य, लायक़ ।

[१०८]

धन-बिछुरन - छन-कन भए
मन कौं मन - मन - ढेरि;
अँसुवन - कन मनकन रही
प्रीति - सुमिरनी फेरि।

धन=नववधू ।

[१०६]

ध्यान धरन दै, धर अधर
धीरैं ही अधरानि
उमड़ि उठै उर - पीर जनि
प्रिय - चुंबन पहचानि

[११०]

हौं सखि, सीसी आतसी,
कहति साँच - ही - साँच ;
बिरह - आँच खाई इती,
तऊ न आई आँच !

[१११]

पुरखन कौ धन दै दियौ
राष्ट्र - प्रेम की राह ;
त्याग - निसेनी चढ़ि चढ़े
चित - चित भामासाह ।

[११२]

करी करन अकरन करनि

करि रन कवच - प्रदान ;

हरन न करि अरि-प्रान निज

करनि दिए निज प्रान ।

करन=दानवीर कर्ण, जिन्होंने अपनी माता कुंती को अपना प्राण-रक्षक कवच प्रदान कर दिया था, और फिर अर्जुन के हाथों मारे गए थे । **करनि**=करनी । **करनि**=हाथों से ।

[११३]

ईसाई, हिंदू, जवन,

ईसा, राम, रहीम,

बैबिल, बेद, कुरान में

जगमग एक असीम ।

जवन=यवन; मुसलमान । **बैबिल**=बाइबिल । **असीम**=अनंत, परमात्मा ।

[११४]

लखि जग-पंथी अति थकित,

संझा - बाँह पसारि—

तम - सरायँ में दै रही

छाँहँ छपा - भटियारि ।

पंथी=यात्री । **संझा-बाँह पसारि**=संध्या-रूपिणी बाहें फैलाकर । **तम-सरायँ**=अंधकार-रूपी सराय । **छाँहँ**=आश्रय, छाया । **छपा भटियारि**=रात्रि-रूपिणी भटियारी ।

[११५]

इकै जाति, भाषा इकै,
इकै जु लिपि - बिसतार—
भारत - भू मैं होय, तौ
टूटैं बंधन - तार।

बिसतार = विस्तार।

[११६]

द्रोही, उचित ही
तुव अँगरेजी - नेह,
दई निरदई पै दई
नाहक हिंदी देह!

हिंदी = हिंदी-भाषा। दई निरदई = निर्दय ब्रह्मा। हिंदी = हिंदुस्थानी।

[११७]

होयँ सयान अयान हू
जुरि गुनवान - समीप;
जगमग एक प्रदीप सौं
जगत अनेक प्रदीप।

[११८]

हृदय - सून तैं असत - तम
　　हरौ, करौ जो सून,
सून - भरन - हित तौ झपटि
　　झट आवेगौ सून।

हृदय-सून = हृदयाकाश, घटाकाश । **असत-तम** = असत् माया का अंधकार। **सून** = शून्य, एकांत, ख़ाली । **सून-भरन-हित** = रिक्त स्थान (Vaccum) को भरने के लिये। **सून** = शून्य, पूर्ण, परमात्मा ।

[११९]

दरसनीय सुनि देस वह,
　　जहँ दुति - ही - दुति होइ,
हौं बौरौ हेरन गयौ,
　　बैठ्यौ निज दुति खोइ।

बौरौ = पागल । **हेरन** = (१) खोजने, (२) देखने ।

[१२०]

एक जोति जग जगमगै
　　जीव - जीव के जीय ;
बिजुरी बिजुरीघर - निकसि
　　ज्यौं जारति पुर - दीय।

जीय = जी, अंतःकरण । **दीय** = दीप, दिए ।

[१२१]

बिरह - ताप-तपि भाप-सम
जब उर उड़त अचेत,
तब सुधि - सिंचित आँसु ही
तब सखि, जीवन देत।

[१२२]

रस - रबि - बस दोऊन के
जे हिलि-मिलि खिलि जात,
वेई तुव मुख - चंद लखि
चख - जलजात लजात।

रस = प्रेम। चख-जलजात = नेत्र-कमल।

[१२३]

जनु नवबय-नृप-मदन-भट
तिय - तन-धर-जय - हेतु—
हनत जु सर, उर - पुर उठत
उरज - समरपन - केतु।

नवबय नृप-मदन-भट = यौवन-नरेश का कामदेव-रूपी योद्धा। धर = धरा, पृथ्वी। उर-पुर = वक्षःस्थल-रूपी नगर। समरपन-केतु = समर्पण-केतु। वह ध्वजा, जो आक्रमणकारी के भय से साहस-हीन हो आत्मसमर्पण कर देने के उद्देश्य से दिखलाई जाती है।

[१२४]

चीत - चंग चंचल उड़ै
चट चौकस ह्वै जाय;
ढोल दिए जनि सजनि, कहुँ
तरुन - पुंज उरझाय।

तरुन = (१) नवयुवक, (२) पेड़।

[१२५]

एती गरमी देखिकै
करि बरसा - अनुमान—
अली भली पिय पैं चली
लली - दसा धरि ध्यान।

नोट—(१) गरमी हो रही है, अतएव पानी बरसेगा। विरहिणी नायिका को वर्षा अधिक सताएगी। इसलिये नायक को बुलाने चली। (२) नायिका गरम (नाराज़) हो रही है, अब रुदन शुरू होगा। अतएव अपराधी नायक को बुलाने चली।

[१२६]

राखत दूरी दूरि ही
सखि, प्रेमिन कौ प्यार;
नित तिनके मन-कुसुम में
बसति बसंत - बहार।

[१२७]

फिरि-फिरि उत खिंचि जात चख

रूप - रहचटैं* - जोर;

घूमि - घूमि पैरत चपल

ज्यों जल - अलि इक ओर।

रहचटैं=चाह। चसका, लिप्सा। **जल-अलि**=पानी का भँवरा, जो काले कीड़े के रूप में खटमल-जैसा होता है। यह एक ही ओर घूम-घूमकर तैरता है।

* पाठांतर 'लालसा' अथवा 'राग के'।

[१२८]

तरुन, तरुनई - तरु सरस

काटि न कलुस - कुठार;

सींचि सुजीवन, सुमन धरि,

करि निज सफल बहार।

कलुस=कलुष, पाप-कर्म। **सुजीवन**=(१) उत्तम जीवन, (२) उत्तम जल। **सुमन**=(१) अच्छा मन, उत्तम विचारों से पूर्ण, विषय-वासना-रहित मन, (२) पुष्प। **सफल**=(१) फल-युक्त, (२) सार्थक। **बहार**=(१) आनंद, उचित संभोग, (२) वसंत।

[१२९]

सखि, जीवन सतरंज-सम,

सावधान ह्वै खेलि,

बस जय लहिबौ ध्यान धरि,

त्यागि सकल रँगरेलि।

[१३०]

जोबन-उपबन-खिलि अली,
  लली - लता मुरझाय !
ज्यों - ज्यों डूबे प्रेम - रस,
  त्यों - त्यों सूखति जाय।

[१३१]

को तो - सो जग - बीच
  दानबीर दारा भयौ ?
नाच रही सिर मीच,
  तऊ न छाँड़ी बान निज।

[१३२]

दुष्ट दुसासन दलमल्यौ
  भीम भीमतम - भेस,
पाल्यौ प्रन, छाक्यौ रकत,
  बाँधे कृस्ना - केस।

दलमल्यौ=मसल डाला, मार डाला। **भीम**=पांडव भीमसेन, जो महाभारत के युद्ध में पांडव-सेना के सेनापति थे। जब जुए में पांडवों के हार जाने पर दुष्ट दुर्योधन की आज्ञा से कौरव-सभा में दुःशासन ने द्रौपदी के केश पकड़कर खींचे थे, और वस्त्र खींचकर उसे नग्न करना चाहा था, तब महावीर भीम ने दुःशासन का रक्त-पान करने और उसी रक्त से द्रौपदी के बालों को बँधवाने का प्रण किया था। अंत में भीम ने अपनी इस प्रतिज्ञा का पालन किया था। **भीमतम**=सबसे अधिक भयानक। **कृस्ना**=द्रौपदी।

[१३३]

सासन - कृषि तें दूर
दीन प्रजा - पंछी रहैं,
सासक - कृषकन कूर
आर्डिनेंस - चंचौ रच्यौ ।

चंचौ = धोखा ।

[१३४]

भजत तजत निसि-संग तम,
लखि निसिपति-मुख-चंद,
अंग - नखत लघुदुति दुरत,
सुदुति परत दुतिमंद ।

अंग = पक्ष । नखत = नक्षत्र ।

[१३५]

पागल कौं सिच्छा कहा,
कायर कौं करवार ?
कहा अंध कौं आरसी,
त्यागी कौं घर - बार ?

[१३६]

चहत न धन, जस, मान, सुख,
मुकति - ध्यान हू नाहिं;
उर उमंग जब-जब उठत,
उकति उदित कहि जाहिं।

[१३७]

सहज सनेह, सुभाव मृदु,
सहजोगिता, सुकाम,
एई दंपति - धाम की
दीवारैं अभिराम।

[१३८]

स्याम-सुरँग रँग-करन - कर
रग - रग रँगत उदोत;
जग - मग जगमग जगमगत,
डग डगमग नहिं होत।

सुरँग-रँग-करन-कर = प्रेम-रूपी रंग की किरणों के हाथ। **उदोत** = प्रकाश से। **जग-मग** = जग का मार्ग। **जगमग जगमगत** = जगमग-जगमग होता है, प्रकाश झिलमिलाता है। **डग** = पद। **डगमग नहिं होत** = नहीं डिगता, नहीं थरथराता, नहीं फिसलता।

[१३९]

बंसीधर - अधरन - धरी
बंसी बस कर लेति ;
सुधि बुधि सजनि, भुलाइकें
जोति इकै कर देति ।

[१४०]

दुरगम दुरग - प्रबेस में
मानस मान न हार ;
राम - नाम की तोप तें
तोरि लेहु दृढ़ द्वार ।

मानस = मन ।

[१४१]

सखी, दूरि राखौ सबै
दूती - करम - कलाप ;
मन - कानन उपजत - बढ़त
प्यार आप - ही - आप ।

मनकानन = मन-रूपी वन । **प्यार** = (१) प्रेम, (२) एक वृक्ष-विशेष, जिसका बीज चिरौंजी है । मध्यभारत एवं बुंदेलखंड में इस वृक्ष को अचार का वृक्ष भी कहते हैं । यह वृक्ष जंगल में अपने आप पैदा होता है, किसी को इसे रोपना नहीं पड़ता ।

[१४२]

खरी साँकरी हित - गली,
बिरह - काँकरी छाइ—
अगम करी तापै अली,
लाज - करी बिठराइ।

लाज-करी = लज्जा-रूपी हाथी।

[१४३]

केहि कारन कसकन लगी
भले मनचले लाल!
आँख - किरकिरी होइ यह,
आँख - पूतरी बाल?

आँख-किरकिरी = आँखों में पड़कर खटकनेवाला तृण-कण, रज-कण आदि। वह, जिसे देखना न चाहें। **आँख-पूतरी** = प्रिय व्यक्ति।

[१४४]

आवत हित-बित-भीख-हित
पति चख - झोरी डारि,
देहु नयन - कर कोर - कन,
मन - भाजन सुसँभारि।

बित = धन। **झोरी डालना** = भिक्षा माँगने के लिये झोली उठाना, साधु या भिक्षुक हो जाना।

[१४५]

सोवत कंत इकंत, चहुँ
चितै रही मुख चाहि;
पै कपोल पै ललक ❀ लखि
भजी लाज - अवगाहि।

रही मुख चाहि = प्रेम से मुँह ताकती रह गई। **अवगाहि** = नहाकर।
* पाठांतर 'पुलक'।

[१४६]

चख-चर चंचल, चार मिलि,
नवल - बयस-थल आइ—
हित-झँपान लै चित - पथिक
मद - गिरि देत चढ़ाइ।

चर = (१) नौकर, (२) दूत। **नवल बयस** = नवयौवन। **झँपान** = वह सवारी, जिसे चार आदमी कंधे पर लेकर पहाड़ पर चढ़ाते हैं। पहाड़ी स्थानों पर अमीर लोग इस पर चढ़कर जाते हैं। **मद** = मदन, कामदेव, नशा, हर्ष।

[१४७]

बार१ बित्यौ लखि, बार२ झुकि
बार३ बिरह के बार४;
बार-बार५ सोचति—'कितै
कीन्हीं बार६ लबार७?'

१ दिन, समय। २ द्वार, दरवाज़ा। ३ वाला। ४ भार, **बोझा**। ५ फिर-फिर। ६ देर। ७ गप्पी, झूठा।

[१४८]

समय समुझि सुख-मिलन कौ,
लहि मुख - चंद - उजास,
मंद - मंद मंदिर चली
लाज - मुखी पिय - पास ।

उजास=प्रकाश, प्रभा ।

[१४६]

गुंजनिकेतन - गुंज तें
मंजुल वंजुल - कुंज,
बिहरैं कुंजबिहारि तहँ
प्रिय, प्रवीन, रस-पुंज ।

गुंजनिकेतन=भौंरा । वंजुल=अशोक का पेड़ ।

[१५०]

मोह - मूरछा लाइ, करि
चितवन - करन - प्रयोग,
छबि - जादूगरनी करति
बरबस बस चित - लोग ।

करन=किरण-रूपी हाथ । लोग=व्यक्ति ।

[१५१]

छुट्यो राज, रानी बिकी,
सहत डोम - गृह दंद,
मृत सुत हू लखि प्रियहिं तें
कर माँगत हरिचंद !

दंद=दुःख, कष्ट। **मृत**=मरा हुआ। **प्रियहिं तें**=प्रिया से भी।

[१५२]

छुआछूत - नागिन - डसी
परी जु जाति अचेत,
देत मंत्रना - मंत्र तें
गांधी - गारुड़ि चेत।

मंत्रना-मंत्र=उपदेश अथवा सम्मति-रूपी मंत्र। **गारुड़ि (गारुड़ी)**=साँप का विष उतारनेवाला।

[१५३]

कूटनीति - पच्छिम लखत
राष्ट्रसंघ - रबि अस्त—
अस्त्र - सस्त्र - दुति-बृद्धि में
राष्ट्र - नखत भे ब्यस्त।

[१५४]

बात - भूलि रे फूल यों
निज श्री - भूलि न फूलि,
काल कुटिल को कर निरखि,
मिलन चहत त धूलि।

बात=(१) हवा, वायु, (२) बातें। **श्री**=(१) शोभा, (२) संपत्ति। **न फूलि**=गर्व न कर।

[१५५]

होत अथिर रितु-सुमन-सम
सदा बाहरी रूप;
पर उर - अंतर - रूप चिर
सदाबहार अनूप।

[१५६]

डारें हास - फुहार - कन
करन - कियारिन माहिं—
सींचें कवि-माली सुरस,
रसिक - सुमन बिकसाहिं।

करन=कर्ण, कान। **सुमन**=(१) सुंदर मन, (२) पुष्प।

नोट—यह दोहा द्विवेदी-मेला (प्रयाग) में, हास-परिहास-सम्मेलन के सुअवसर पर, वहीं तत्काल लिखा गया था।

[१५७]

सतसंगति लघु - बंस हू
    हरि अवगुन गुन देति;
केहि न कान्ह-अधरन - धरी
    बंसी बस करि लेति ?

लघु बंस = (१) अाछा कुल, (२) तुच्छ बाँस।

[१५८]

धाय द्वारिकाराय द्रवि,
    पुनि सुभाय मुसकाय,
सिर नवाय, गहि पायँ, उर
    लाय, रहे लपटाय।

[१५९]

नंदलाल - रँग - आलरँग
    चीत - चीर रँगि लेहु;
जगत - आलजंजाल कौ
    दीमक लगन न देहु।

रँग=प्रेम। आलरँग=इस रंग में रँगे गए कपड़े पर दीमक नहीं लगती। चीत=चित्त। आलजंजाल = झंझट, बखेड़ा, माया।

[१६०]

तू हेरत इत-उत फिरत,
वह घट रह्यौ समाइ;
आपौ खोवै आपनों,
मिलै आप ही आइ।

घट=हृदय। आपौ=अहंत्व, अहंकार। आप ही=स्वयं परमात्मा।

[१६१]

संदेसन-पठवन, लिखन,
मिलन कहा मम प्रान,
मन दोउन के इक जबै,
बिछुरन मिलन समान।

[१६२]

धरि हरि-छबि हिय-कोस में
गोपी, हित-पट गोइ;
बिरहा-डाकू, समय-ठग
तेहि हरि सकैं न कोइ।

हिय-कोस=हृदय का ख़ज़ाना। हरि सकैं=हरण कर सकैं।

[१६३]

जगति जोति तें प्रिय पतँग
जारति जाय लुभाय ?
हँसि न दीपिका, लखि अरी
तुव जीवन हू जाय !

जोति= (१) प्रभा, (२) सुंदरता। **जाय** = वृथा।
जीवन=(१) प्राण, ज़िंदगी, (२) घी।

[१६४]

बिछुरन सुख-खनि साँचई,
मन बिहरै सुखकंद ;
छन-भर कौ सुख मिलन मैं,
बिछुरन चिर आनंद।

[१६५]

झीनें अंबर झलमलति
उरजनि - छबि छितराइ ;
रजत-रजनि जुग चंद-दुति
अंबर तें छिति छाइ।

अंबर=वस्त्र। **रजत-रजनि**=चाँदनी रात। **अंबर तें**=(१) आकाश से निकलकर, (२) बादल से निकलकर।

[१६६]

जनु जिय जोबन - बटपरा
तिय-तन - रतन लुभाइ—
लियौ चहत, तातें गयो
मन - स्वामी अकुलाइ।

[१६७]

सर लगि छत करि, हरि रकत,
हतप्रभ करत सुअंग ;
चितवन सुख भरि, चपल करि,
चित पर चीतत रंग।

छत=घाव। हतप्रभ=प्रभा-हीन, श्री-विहीन। रंग=प्रेम-रंग।

[१६८]

धाइ धरति नहिं अंग जो
मुरछा - अली अयान,
उमगि प्रान - पति - संग तो
करतो प्रान पयान।

अयान=अजान। पयान=गमन।

[१६६]

बिरह-उदधि-दुख-बीचि तें
    नारी - नाव बचाइ—
लई आइ पिय-ज्वार जनु
    अलि, उर - तीर लगाइ।

पिय-ज्वार=प्रिय पति-रूपी ज्वार।

[१७०]

लहि पिय-रबि तें हित-किरन
    बिकसित रह्यौ अमंद ;
आइ बीच अनरस - अवनि
    किय मलीन मुख - चंद।

पिय-रबि=प्रिय पति-रूपी सूर्य। **बिकसित**=खिला। **अनरस-अवनि**=रुष्टता-रूपिणी पृथ्वी।

[१७१]

जुगन - जुगन बिछुरे रहे
    हम तें हरिजन लोग,
गाँधी - जोगी - जोग किय
    छन में जुगल - सँजोग।

[१७२]

जुद्ध - मद्ध बल सों सबल
कला दिखाई देति ;
निरबल मकरिहु जाल बुनि
सरप - दरप हरि लेति ।

मकरिहु=मकड़ी भी । **सरप-दरप**=सर्प का घमंड ।

[१७३]

इक मियान में रहि सकत
कहुँ जदि जुग तरवार ,
तौ भारत हू सहि सकत
जुग-सासन कौ भार !

[१७४]

चंचल अंचल छलछलति
जिमि मुख - छबि अवदात,
सित घन छनि-छनि झलमलति
तिमि दिनमनि-दुति प्रात ।

[१७५]

निरबल हू दल बाँधिकें
सबलहिं देत हराइ;
ज्यों सींगन सों गाय - गन
बन - पति देत भगाइ।

बन-पति=सिंह

[१७६]

कबि सँग मैं राखत हुते
जे नरपाल सुजान,
राखत आज खुसामदी,
मोटर, गनिका, स्वान।

[१७७]

मिलत न भोजन, नगन तन,
मन मलीन, पथ - बासु,
निरधनता साकार लखि
ढारति करुनहु आँसु।

करुनहु=करुणा भी।

[१७८]

निठुर, नीच, नादान
 बिरह न छाँड़त संग छिन;
सहृदय सजनि सुजान
 मीच, याहि लै जाहु किन ?

[१७९]

हीय - दीय-हित-जोति लहि
 अग जग - बासी स्याम !
दृग - दरपन बिंबित करहु
 बिमल बदन बसु जाम।

हीय-दीय=हृदय-रूपी दिया।

[१८०]

जोति - उघरनी तें अजहुँ
 खोलि कपट - पट - द्वारु—
पंजर - पिंजर तें प्रभो,
 पंछी - प्रान उबारु।

पंजर-पिंजर=शरीर-रूपी पिंजड़ा।

[१८१]

बिरह-सिंधु उमड़्यौ इतौ
पिय - पयान - तूफान,
बिथा-बीचि - अवली अली,
अथिर प्रान - जलजान।

पिय-पयान-तूफान=प्रिय पति का गमन-रूपी तूफ़ान। **बिथा-बीचि-अवली**=व्यथा की लहरों की क़तार में। **प्रान-जलजान**=प्राण-रूपी जहाज़।

[१८२]

खरी दूबरी तिय करी
बिरह निठुर, बरजोर,
चितवन चढ़ति पहार जनु
जब चितवति मम ओर।

[१८३]

आँसु - माल तुव पहिरिहै
किमि तन बिरहा - ऐन?
पीर - सिंधु उर उठत लखि
नीर - बिंदु तुव नैन!

[१८४]

राधाबर - अधरन - धरी
बाँसुरिया बौराइ—
प्रतिपल पियत पियूष, प
बिसम बिसहिं बरसाइ।

अधरन=ओंठ। पियूख=अमृत।

[१८५]

अलि, चंचल चित-फंद में
अद्भुत बंद लखाइ;
चालक चतुर - चलाँक हू
बाँधन चलि बँधि जाइ!

फंद=फंदा। चालक=चलानेवाला।

[१८६]

है कलिहारी - तूल,
कलहारी, पिय-कल-हरनि;
मुख तौ सुंदर फूल,
हिये - मूल बिस - गाँठ पै।

कलिहारी=एक विषैला पौधा, जिसका फूल अत्यंत सुंदर होता है, और जड़ में विषैली गाँठें रहती हैं। तूल=तुल्य, समान। कलहारी=कलहकारिणी, कर्कशा।

[१८७]

कहा समुझि इनकौं दियौ
लोयन लोयन - नाम,
लोय-सरिस बालम - बिरह
बरत जु बिना बिराम।

लोयन=लोगों ने। **लोयन**=(१) लोचन, (२) लोय (लौ) नहीं है जिनमें। **लोय**=लौ।

[१८८]

सुरस-सुगंध - बिकास-बिधि
चतुर मधुप मधु - अंध!
लीन्हौं पदुमिनि-प्रेम परि
भलो ज्ञान कौ धंध!!

[१८९]

जोबन - मकतब तौ अजब
करतब करत लखाय;
पढ़ैं प्रेम - पोथी सुमति,
पै मति मारी जाय!

सुमति=अत्यंत बुद्धिमान्।

[१६०]

गुंजनिकेतन - गुंज - जुत
हुतौ कितौ मनरंज !
लुंज - पुंज सो कुंज लखि
क्यों न होइ मन - रंज ?

गुंजनिकेतन=भौंरा । मनरंज=मनोरंजन करनेवाला । लुंज=ठूँठ ।

[१६१]

देस कला नव बिसतरत,
हरत ताप चहुँ ओर,
करत प्रफुल्ल प्रफुल्लचँद
चतुरन - चित्त - चकोर ।

प्रफुल्लचँद=बंगाल के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता सर प्रफुल्लचंद्र राय । कला, ताप, प्रफुल्ल, प्रफुल्लचंद, ये चारो श्लिष्ट पद हैं ।

[१६२]

दीसत गरभ स्वराज कौ
स्वेत पत्रिका - पेट ;
सब गुन-जुत कछु जुगन में
ह्वैहै भारत - भेट ।

स्वेत पत्रिका=White Paper.

[१६३]

काम, दाम, आराम कौ
सुघर समनुवै होइ,
तौ सुरपुर की कलपना
कबहूँ करै न कोइ।

समनवै (समन्वय) = संयोग। **कलपना** = कल्पना।

[१६४]

जटित सितारन - छंद,
अंबर अंगनि झलमलत;
चली जाति गति मंद,
सजनि-रजनिमुख-चंद-दुति।

सितारन = (१) सलमा-सितारा, (२) तारागण। **छंद** = समूह। **अंबर** = (१) वस्त्र, (२) आकाश।

[१६५]

बसि ऊँचे कुट यों सुमन!
मन इतरैए नाहिं;
यह बिकास दिन द्वैक कौ,
मिलिहै माटी माहिं।

कुट = (१) वृक्ष, (२) गढ़। **सुमन** = (१) फूल, (२) अच्छे मनवाला। **बिकास** = (१) प्रस्फुटन, खिलना, (२) उन्नति, वृद्धि। **मिट्टी में मिलना** = (१) टूटकर धूल में गिरना, (२) नष्ट होना।

[१९६]

कंचन होत खरो - खरो,
लहे आँच कौ संग;
सुजनन पै सतसंग सौं
चढ़त चौगुनौं रंग।

[१९७]

कबिता, कंचन, कामिनी
करैं कृपा की कोर,
हाथ पसारै कौन फिर
वहि अनत की ओर?

[१९८]

फूटि-फूटि बँधि रव करैं
बीचि त्रिबेनी - बीच;
फूटि - फूटि रोवैं मनौं
मुकत निरखि नर नीच।

फूटि-फूटि = पृथक् हो-होकर। **रव** = आवाज़। **बीचि** = लहर।

[१९९]

चहूँ पास हरत कहा
करि-करि जाय प्रयास ?
जिय जाके साँची लगन,
पिय वाके ही पास !

जाय = वृथा ।

[२००]

नंद-नंद सुख-कंद कौ
मंद हँसत मुख-चंद,
नसत दंद-छलछंद-तम,
जगत जगत आनंद ।

दंद = द्वंद्व ।

दोहों की अकारादिक्रम-सूची

दोहे का प्रथम चरण	दोहा		पृष्ठ
अगम सिंधु जिमि सीप-उर	७८	...	८५
अलि, चलि, थकि सुख-रैन में	६५	...	८०
अलि, चंचल चित-फंद में	१८५	...	१२१
आवत हित-वित-भीख-हित	१४४	...	१०७
आँसु-माल तुव पहिरिहै	१८३	...	१२०
इक मियान मैं रहि सकत	१७३	...	११७
इकै जाति, भाषा इकै	११५	...	६८
इड़ा-गंग, पिंगला-जमुन	१८	...	६५
ईसाई, हिंदू, जवन	११३	...	६७
उत उगलत ज्वालामुखी	८८	...	८८
उर-धरकनि-धुनि माहिं सुनि	५८	...	७८
उर-पुर अरि-परनारि तें	१०२	...	६३
ऊँच-जनम जन, जे हरैं	१५	...	६४
एक जोति जग जगमगै	१२०	...	६६
एती गरमी देखिकै	१२५	...	१०१
कठिन बिरह ऐसी करी	४	...	६०
कढ़ि सर तें द्रुत दै गई	३०	...	६६
कब तें, मन-भाजन लएँ	२०	...	६५
कबि सँग मैं राखत हुते	१७६	...	११८
कबि-सुरबैन-बीर-रस	११	...	६२

दोहे का प्रथम चरण	दोहा		पृष्ठ
करत रहत संतत नयन	२७	...	६८
करी करन अकरन करनि	११२	...	६७
कला बढ़ै, जो आन पै	३६	...	७१
कलिजुग ही मैं मैं लखी	७१	...	८२
कविता, कंचन, कामिनी	१६७	...	१२५
कहा भयौ पिय कों, कहत	४६	...	७४
कहा समुझि इनकौं दियौ	१८७	...	१२२
काम, दाम, आगम कौ	१६३	...	१२४
कियौ कोप चित-चोप सों	१०४	...	६४
कूटनीति पच्छिम लखत	१५३	...	११०
केहि कारन कसकन लगी	१४३	....	१०७
कैसें बचिहै लाज तरु	४५	...	७४
को तो सो जग-बीच	१३१	...	१०३
कोप-कोकनद-अवलि अलि	२	...	५६
कंचन होत खरो खरो	१६६	...	१२५
काँटनि-कंकरिनि बरुनि चुनि	१६	...	६५
खरी दूबरी तिय करी	१८२	...	१२०
खरी साँकरी हित-गली	१४२	...	१०७
गई रात, साथी चले	७६	...	८५
ग्राह-गहत गजराज की	६०	...	७६
गांधी-गुरु तें ग्याँन लै	७२	...	८३
गुंजनिकेतन-गुंज-जुत	१६०	...	१२३
गुंजनिकेतन गुंज तें	१४६	...	१०६
गुंजहार गर, गुंजकर	चार	...	५६
गंगा-जमुना-सरसुती	४६	...	७५

दोहे का प्रथम चरण	दोहा		पृष्ठ
चख-खंजन परि किरकिरी	१००	...	६२
चख-चर चंचल, चार मिलि	१४६	...	१०८
चख-भख तव दृग-सर-सरस	६६	...	८१
चख-तुरंग माते इते	७०	...	८२
चहत न धन, जस, मान, सुख	१३६	...	१०५
चहूँ पास हेरत कहा	१६६	...	१२६
चित-चकमक पै चोट दै	२६	...	६७
चीत-चंग चंचल उड़ै	१२४	...	१०१
चीतत चिती जु चीत-पट	२५	...	६७
चंचल अंचल छलछलति	१७४	...	११७
छन-छन छबि की छाक सों	१०५	...	६४
छुआछूत-नागिन-डसी	१५२	...	११०
छुट्यो राज, रानी बिकी	१५१	...	११०
जग-तरनी में तन-तरी	३६	...	७२
जगति जांति तें प्रिय पतँग	१५३	...	११४
जगि-जगि, बुझि-बुझि जगत में	८०	...	८५
जटित सितारन-छंद	१६४	...	१२४
जनम दियौ, पाल्यौ, तऊ	६	...	५७
जनम-मरन-करियन-जुरी	६६	...	६२
जनु आवत लखि तन-सदन	८	...	६१
जनु जिय जोबन-चटपरा	१६६	...	११५
जनु जु रजनि-बिछुरन रहे	४४	...	७७
जनु नवबय-नृप-मदन-भट	१२३	...	१००
जाति-जांक भारत-रकत	७६	...	८४
जाति-पाँति की भीति तौ	३७	...	७१

दोहे का प्रथम चरण	दोहा		पृष्ठ
जीवन-धन-जय-चाह	७३	...	८३
जुगन-जुगन बिछुरे रहे	१७१	...	११६
जुद्ध-मद्ध बल सों सबल	१७२	...	११७
जोति-उधरनी तें अजहुँ	१८०	...	११६
जोबन-उपबन-खिलि अली	१३०	...	१०३
जोबन-देस-प्रबेस करि	७	...	६१
जोबन-बन-सुख-लीन	१	...	५६
जोबन-मकतब तौ अजब	१८६	...	१२२
झपकि रही, धीरें चलौ	५	...	६०
झपकि लरत, गिरि-गिरि परत	६४	...	८०
झर-सम दीजै देस-हित	१२	...	६३
झीनें अंबर झलमलति	१६५	...	११४
डारें हास-फुहार-कन	१५६	...	१११
तचत बिरह-रबि उर-उदधि	२२	...	६६
तन-उपबन सहिहै कहा	४२	...	७३
तरुन, तरुनई-तरु सरस	१२८	...	१०२
तिय उलही पिय-आगमन	६६	...	८२
तू हेरत इत-उत फिरत	१६०	...	११३
दमकति दरपन-दरप दरि	६	...	६२
दरसनीय सुनि देस वह	११६	...	
दिनकर-पुट-बर-बरन लै	६४	...	६०
दिन-नायक ज्यौं-ज्यौं बढ़त	७४	...	८३
दीसत गरभ स्वराज कौ	१६२	...	१२३
दुरगम दुरग-प्रवेस में	१४०	...	१०६
दुष्ट-दनुज-दल-दलन कों	५२	...	७६

दोहे का प्रथम चरण	दोहा		पृष्ठ
दुष्ट दुसासन दलमल्यौ	१३२	...	१०३
देस कला नव बिसतरत	१६१	...	१२३
देह-देस लाग्यौ चढ़न	२१	...	६६
दंपति-हित-डोरी खरी	१०६	...	६५
द्रवि-द्रवि, दै-दै धीर नित	३	....	६०
धन-बिछुरन-छन-कन भए	१०८	...	६५
ध्यान धरन दै, धर अधर	१०६	...	६६
धाय द्वारिकाराय द्रवि	१५८	...	११२
धाय धरति नहिं अंग जो	१६८	...	११५
धरि हरि-छबि हिय-कोस में	१६२	...	११३
नई लगन किय गेह	६१	...	७६
नई सिकारिन-नारि	२४	...	६७
नखत-मुकत आँगन-गगन	३४	...	७०
नजर-तीर तैं नैन-पुर	८७	...	८८
नयनन रूप ललाम तुव	पाँच	...	५७
नयौ नेह दै पिय ! दियौ	६३	...	८०
नव-तन-देसहिं जीति जनु	८१	...	८६
नाह-नेह-नभ तैं अली	१०	...	६२
निठुर, नीच, नादान	१७८	...	११६
नियमित नर निज काज-हित	५५	...	७७
निरबल हू दल बाँधिकैं	१७५	...	१२८
नीच मीच कौं मत कहै	६८	...	६१
नीरस हिय-तमकूप मम	आठ	...	५८
नेह-नीर भरि-भरि नयन	२३	...	६६
नैन-आतसी काँच परि	८२	...	८६

दोहे का प्रथम चरण	दोहा		पृष्ठ
नंद-नंद सुख-कंद कौ	२००	...	१२६
नंदलाल-रँग-आलरँग	१५६	...	११२
पर राष्ट्रन-अरि-चोट तैं	६३	...	६०
पलक पाँछि पग-धूरि हौं	८३	...	८६
प्रभा प्रभाकर देत जेहि	१३	...	६३
पागल कौं सिच्छा कहा	१३५	...	१०४
पुरखन कौ धन दै दियौ	१११	...	६६
पुर तैं पलटे पीय की	२६	...	६८
पुसकर-रज तं मन-मुकुर	३८	...	७१
फिरि-फिरि उत खिंचि जात चख	११७	...	१०२
फूटि-फूटि बँधि रव करैं	१६८	...	१२५
बस न हमारौ, बस करहु	८६	...	८८
बसि ऊँचे कुटुंबां सुमन	१६५	...	१२४
बही जु आवन-गात में	५०	...	७५
बात-फूलि रे फूल यां	१५४	...	१११
बार बित्यौ लखि, बार झुकि	१४७	...	१०८
बिछुरन सुख-खनि साँचई	१६४	...	११४
बिरह-उदधि-दुख-बीचि तैं	१६६	...	११६
बिरह-ताप-तपि भाप-सम	१२१	...	१००
बिरह-सिंधु उमड्यौ इतौ	१८१	...	१२०
बिरह-बिजोगिनि कौ करत	१०७	...	६५
बिंब बिलोकन कौं कहा	८४	...	८७
बीय दीय ज्यों-ज्यों बरे	४४	...	७३
बीर धीर सहि तोर-झर	३२	...	६६
बंदि बिनायक बिघन-अरि	दो	...	५६

दोहे का प्रथम चरण	दोहा		पृष्ठ
बंसीधर-अधरन-धरी	१३६	...	१०६
भजत तजत निसि-संग तम	१३४	...	१०४
भारत-भूधर तें ढरति	६२	...	८६
भारत-सरहिं सरोजिनी	६१	...	८६
भाव-भाप भरि, कलपना	१७	...	६४
मति-सजनी बरजी किती	६	...	६१
मन-कानन में धँसि कुटिल	१०३	...	६४
मन-मानिक-कन देहु	८५	...	८७
मनौ कहे-पै देत	४१	...	७२
मम तन तव रज-राज	सात	...	५७
मृदु हँसि, पुनि-पुनि बोलि प्रिय	२८	...	६८
मानस-खस-टाटो सरस	५६	...	७७
माया-नींद भुलाइकैं	४०	...	७२
मिलत न भोजन, नगन तन	१७७	...	११८
मुकता मुख-अँसुआ भए	४३	...	७३
मोह-मूरछा लाइ, करि	१५०	...	१०६
रमनी-रतननि हीर यह	६८	...	८१
रस-रवि-बस दोऊन के	१२२	...	१००
रही अछूतोद्धार-नद	३३	...	७०
राखत दूरी दूरि ही	१२६	...	१०१
राखत दंपति-दीप कौं	४७	...	७४
राधावर-अधरन-धरी	१८४	...	१२१
लखि जग पंथी अति थकित	११४	...	६७
लखिकैं भारत-दीप कों	३१	...	६६
लरिकाईं-ऊषा दुरी	६०	...	८६

दोहे का प्रथम चरण	दोहा		पृष्ठ
लहि पिय-रवि तें हित-किरन	१७०	...	११६
लेत-देत संदेस सब	६२	...	७६
लंक लचाइ, नचाइ दृग	४८	...	७५
श्रीराधा-बाधाहरनि	तीन	...	५६
सखि, जीवन सतरंज-सम	१२६	...	१०२
सखी, दूरि राखौ सबै	१४१	...	१०६
सत-इसटिक जग-फील्ड लै	५६	...	७८
सतसैया के दोहरा	६७	...	६१
सतसंगति लघु-बंस हू	१५७	...	११२
सबै सुखन कौ सोत	३५	...	७०
समय समुझि सुख-मिलन कौ	१४८	...	१०६
सर लगि छत करि, हरि रकत	१६७	...	११५
सहज सनेह, सुभाव मृदु	१३७	...	१०५
स्याम-सुरँग-रँग-करन-कर	१३८	...	१०५
साजन सावन-सूर-सम	६७	...	८१
सासन-कृपि तें दूर	१३३	...	१०४
सिव-गांधी दोई भए	५१	...	७६
सीत-घाम-लू-दुख सहत	५७	...	७८
सुख-सँदेस के ज्वार चढ़ि	१०१	...	६३
सुखद समै संगी सबै	६५	...	६०
सुमिरौ वा बिघनेस कौ	एक	...	५५
सुरस-सुगंध-बिकास-बिधि	१८८	...	१२२
सुलभ सनेह न ब्याह सों	७७	...	८४
सोवत कंत इकंत, चहुँ	१४५	...	१०८
संगत के अनुसार ही	६६	...	६१

दोहे का प्रथम चरण	दोहा		पृष्ठ
संतत सहज सुभाव सों	१६	...	६४
संदेसन-पठवन, लिखन	१६१	...	११३
हरिजन तें चाहौ भजन	५३	...	७६
हिममय परबत पर परति	१४	...	६३
हिंदी-द्रोही, उचित ही	११६	...	६८
हीय-दीय-हित-जोति लहि	१७६	...	११६
हृदय कूप, मन रहँट, सुधि	८६	...	८
हृदय-सून तें असत-तम	११८	...	६६
है कलिहारी-तूल	१८६	...	१२१
होत अथिर रितु-सुमन-सम	१५५	...	१११
होत निरगुनी हू गुनी	७५	...	८४
होयँ सयान अयान हू	११७	...	६८
हौं सखि, सीसी आतसी	११०	...	६६

सम्मतियाँ

१. संस्कृत-संसार के प्रकांड पंडितों की राय

(१) संस्कृत के प्रकांड पंडित, दर्शन-शास्त्र के अद्वितीय विद्वान् डॉक्टर भगवानदास एम्० एल्० ए०—जैसी सुंदर कविता, वैसी ही सुंदर वेश-भूषा अर्थात् पुस्तक की छपाई आदि।......मन में निश्चय हुआ कि अपने विषय और प्रकार के किन्हीं दोहों से कम नहीं हैं।

दोहे बहुत अच्छे हैं, बहुत अच्छे हैं। ईश्वर आपकी कविता-शक्ति को अधिकाधिक बल और विकास दें। पर यह भी चाहता हूँ कि और ऊँचे विषय और प्रकार की ओर उस शक्ति को झुका भी दें। चाहे स्वाभाविक अल्परसता के कारण, चाहे वार्धक्य से बुद्धि की स्फूर्ति के ह्रास और नीरसता की वृद्धि के कारण, मेरे मन में फिर-फिर यही बात उठती रहती है कि जैसे तुलसीदासजी ने 'रामायण' लिखकर "प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः", जिससे आज तीन सौ वर्ष से करोड़ों भारतवासियों के हृदय के अँधेरे में उजाला होता रहा है, वैसे ही कोई 'भागवत' या 'कृष्णायन' लिखता, जिससे वह उजाला और स्थायी और उज्ज्वल हो जाता, तो बहुत अच्छा होता। कई कवियों से समय-समय पर सूचना भी की, पर अब तक इस ओर किसी ने मन नहीं दिया। आपको बहुत अच्छी शक्ति मिली है, उसका ऊँचा उपयोग कीजिए।

'भागवत' लिखते बन जाय, तो करोड़ों ही पुश्त-दर-पुश्त लाभ

उठावेंगे, सराहेंगे, हृदय में आशीर्वाद देंगे। देखिए, बने, तो संस्कृत-भागवत में नहाइए, उसके रस में भीगिए, उसको आकंठ पीजिए, और फिर जैसे सूर्य समुद्र का पानी सोखकर बरसाता है, वैसे हिंदी-भाषा में उस रस की वर्षा कीजिए।

(२) **संस्कृत और अँगरेज़ी के प्रकांड पंडित डॉक्टर गंगानाथ झा, भूतपूर्व वाइस-चांसलर प्रयाग-विश्वविद्यालय—** आजकल तो बेचारी ब्रजभाषा ऐसी दुर्दशा में गिरी है कि अभिनव साहित्य-धुरंधरों द्वारा प्रायः उसकी निंदा ही सुनने में आती है। ऐसी दशा में आपने वृद्धा को हस्तावलंब देने का साहस किया, तावन्मात्रेण आपका उद्योग सराहनीय है। उस पर भी जब आपने प्रत्यक्ष दिखा दिया कि ब्रजभाषा की कविता अब भी उत्तम कोटि की—मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि सर्वोत्तम कोटि की—हो सकती है, तब तो आप धन्यवाद ही नहीं, पूर्ण आशीर्वाद के पात्र हैं।

(३) **संस्कृत के वर्तमान समय में संसार के सबसे बड़े विद्वान्, जयपुर-राजसभा के प्रधान पंडित, महामहोपदेशक, समीक्षाचक्रवर्ती, विद्यावाचस्पति श्रीपंडित मधुसूदन शर्मा ओझा जयपुर-निवासी—** यह दोहावली बिहारी-सतसई से स्पर्धा करनेवाली ही नहीं, प्रत्युत कई भावों में उसके टक्कर लगानेवाली पैदा हो गई है। इसमें नयन-वर्णन, सामाजिक विचार और शांत-रस आदि के कई दोहे बिहारी से बढ़कर हैं।

भार्गवजी की रचना के चमत्कार और मौलिकता तो प्रधान गुण हैं। आपकी कोमल-कांत पदावली बड़ी ही श्लाघ्य है। इस कार्य के लिये मैं भार्गवजी को हार्दिक धन्यवाद देकर उन्हें प्रोत्साहित करता हूँ कि वह अपने इस ग्रंथ को आगे और भी बढ़ाकर हिंदी-साहित्य का उपकार करें।

(४) संस्कृत-संसार के सर्वश्रेष्ठ काव्य-मर्मज्ञ, विद्वच्छिरोमणि पूज्यपाद पं० बालकृष्णजी मिश्र महाराज, हिंदू-विश्वविद्यालय में संस्कृत-साहित्य-विभाग के माननीय अध्यक्ष—
कविकुलकुमुदकलाकरेण श्रीदुलारेलालभार्गवेण कृतां दोहावलीमाकलयन् अतितमानन्दमनुविन्दामि। यदस्यां रसानुसारिणा छन्दसा रीत्या कोमलतया मांसलत्वेन च मनोरमतास्पदानि विद्यन्ते पदानि। अभिधया लक्षणया चाप्रधानवृत्त्या प्रतिपादिताः पदार्थाः प्रायेण विच्छित्ति विशेषाधायिव्यङ्ग्यव्यञ्जकतया पदकदम्बकानीव गुणपदवीं नातिशेरते सत्यपि समुदये विना प्रयासमायातानां शब्दार्थालङ्कृतीनाम्। रसेषु शृङ्गार एव प्राधान्येन ध्वनेरध्वनि पथिकतां दधाति। इयं किल सहृदयहृदयहारिणी बिहारीसतसई प्रभृतिमपि पुरातनीं दोहावलीं विस्मारयति स्म, तस्मात् स्तोकतोऽपि नास्ति विप्रतिपत्तरस्या अत्युपादेयतायाम्। किंतु व्यङ्ग्यालङ्कारप्रकाशकं विवरणमस्यात्यन्तमावश्यकम्, येनाल्पमतीनामपि मानसे प्रमोदः पादमादधीनेति।

(कवि-कुल-कुमुद-कलाकर श्रीदुलारेलाल भार्गव द्वारा प्रणीत दोहावली को पढ़कर मुझे अतितम (अतुल) आनंद हुआ। इसके पद रसानुसारी छंद, रीति, कोमलता और पुष्टता से युक्त होने के कारण मनोरमता के सदन हैं। विना प्रयास आए हुए शब्दालंकारों और अर्थालंकारों के साथ-ही-साथ अभिधा, लक्षणा और व्यंजना से प्रतिपादित अर्थ द्वारा वैचित्र्य-विशेष प्रदर्शित करते हुए ये पद गुण-पदवी का भी अनुसरण करते हैं। रसों में शृंगार ही प्रधानतया ध्वनि के मार्ग का अनुगामी है। सहृदय जनों का हृदय हरण करनेवाली इस 'दोहावली' ने बिहारी-सतसई आदि पुरानी दोहावलियों को भी भुला दिया है, अतः इसका अत्यत उपादेयता रंचकमात्र भी अस्वीकार नहीं की जा सकती। किंतु इसके व्यंग्यालंकार का

स्पष्टीकरण अत्यंत आवश्यक है, जिससे थोड़ी बुद्धिवाले भी इसका रसास्वादन कर सकें।

नोट—थोड़ी बुद्धिवालों के लिये भी विस्तृत टीका और व्याख्या-सहित एक संस्करण निकाला जा रहा है। टीका सुप्रसिद्ध काव्य-मर्मज्ञ सिताकारीजी ने की है।—प्रबंधक गंगा-ग्रंथागार

२. हिंदी-विद्वानों और काव्य-मर्मज्ञों की राय

(१) महाकवि रत्नाकरजी के 'ऊधव-शतक' और महाकवि हरिऔधजी के 'रस-कलस' के भूमिका-लेखक तथा सर्वप्रधान प्रशंसक, वर्तमान समय में ब्रजभाषा-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ आलोचक विद्वद्वर पं० रमाशंकरजी शुक्ल 'रसाल' एम्० ए० (हिंदी-अध्यापक, प्रयाग-विश्वविद्यालय) दुलारे-दोहावली को आधुनिक ब्रजभाषा-काव्यों से ही नहीं, बिहारी-सतसई तक से ऊँची रचना बतलाते हैं। सम्मति पढ़िए—

यह तो आपको स्मरण ही होगा कि मैं आपकी 'दोहावली' को साहित्य-सदन की 'रत्नावली' कह चुका हूँ। दोहे वास्तव में अपने रंग-ढंग के अप्रतिम हैं। ये बड़े ही ललित, काव्य-कला-कलित एवं ध्वनि-व्यंजना-वलित हैं। जैसा अन्य विद्वानों ने इस 'दोहावली' के संबंध में कहा है, वैसा प्रत्येक काव्य-कला कौशल-प्रेमी सहृदय व्यक्ति कहेगा। इसकी महत्ता-सत्ता दिन-प्रति-दिन बढ़ेगी। सत्काव्य के सभी लक्षण इसमें सुंदर रूप में प्राप्त होते हैं। यों तो सतसइयाँ कई हैं, किंतु आपकी यह 'दोहावली' अप्रतिम ही है। भाषा-भाव, काव्य-कौशल, सभी दृष्टि से यह सर्वथा सराहनीय है। आप इस अमर रचना से अमर हो गए। ब्रजभाषा-काव्य के रसाल-वन में कल कंठ से ककुभ कूजित करनेवाला कोकिल यदि आपको इस रचना के लिये कहा जाय, तो सर्वथा उपयुक्त ही होगा। यदि इस रचना को मुक्तक-

माला की मंजु मणि-मनका कहें, तो अत्युक्ति न होगी। यदि विद्वानों ने इसके दोहों को बिहारी के दोहों के समकक्ष या उनसे भी कुछ उन्नत कहा है, तो ठीक ही कहा है। ब्रजभाषा-काव्य-क्षेत्र में इस समय इस रचना तथा आपको बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त हो गया है।

आपने ब्रजभाषा-काव्य को इस रचना के रसामृत से सिंचित कर नव-जीवन प्रदानकर दिया है। अब यह कहना, जैसा कुछ लोग कहते हैं, कि अमुक कवि (सत्यनारायण, हरिश्चंद्र आदि) ब्रजभाषा का अंतिम कवि था, सर्वथा भ्रम-मूलक और भिन्न-रुचि-मात्र-सूचक ठहरता है। किं बहुना? निष्कर्ष यह है कि इसमें वाक्य-लाघव, अर्थ-गौरव, माधुर्य एवं मंजु मार्दव सर्वत्र चारु चातुर्य-चमत्कार के साथ मिलते हैं। वर्तमान समय में प्रकाशित काव्यों में यह सबसे उत्कृष्ट है।

(२) हिंदी-संसार के सर्वश्रेष्ठ समालोचक, विद्वद्वर, कवि-श्रेष्ठ पं० रामचंद्रजी शुक्ल (प्रोफ़ेसर हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस)—केवल सात सौ दोहे रचकर बिहारी ने बड़े-बड़े कवियों के बीच एक विशेष स्थान प्राप्त किया। इसका कारण है उनकी वह प्रतिभा, जिसके बल से उन्होंने एक-एक दोहे के भीतर क्षण-भर में रस से स्निग्ध अथवा वैचित्र्य से चमत्कृत कर देनेवाली सामग्री प्रचुर परिमाण में भर दी है। मुक्तक के क्षेत्र में इसी प्रकार की प्रतिभा अपेक्षित होती है। राजदरबारों में मुक्तक काव्य को बहुत प्रोत्साहन मिलता रहा है, क्योंकि किसी समादृत मंडली के मनोरंजन के लिये वह बहुत ही उपयुक्त होता है। बिहारी के पीछे कई कवियों ने उनका अनुसरण किया, पर बिहारी अपनी जगह पर अकेले ही बने रहे। हिंदी-काव्य के इस वर्तमान युग में—जिसमें नई-नई भूमियों पर नई-नई पद्धतियों की परीक्षा चल रही है—किसी को यह आशा न थी कि कोई पथिक सामान लादकर बिहारी के उस पुराने रास्ते पर चलेगा।........

बिहारी के कुछ दोहों में उक्ति-वैचित्र्य प्रधान है, और कुछ में रस-विधान। ऐसी ही दो श्रेणियों के दोहे इस 'दोहावली' में भी हैं। रसात्मक दोहों में बिहारी की-सी मधुर भाव-व्यंजना और वैचित्र्य-प्रधान दोहों में उन्हीं का-सा चमत्कार-पूर्ण शब्द-कौशल पाया जाता है। जिस ढंग की प्रतिभा का फल बिहारी की सतसई है, उसी ढंग की प्रतिभा का फल दुलारेलालजी की यह दोहावली है, इसमें संदेह नहीं। कुछ दोहों में देश-भक्ति, अछूतोद्धार आदि की भावना का अनूठेपन के साथ समावेश करके कवि ने पुराने साँचे में नई सामग्री ढालने की अच्छी कला दिखाई है। आधुनिक काव्य-क्षेत्र में दुलारेलालजी ने ब्रजभाषा-काव्य की चमत्कार-पद्धति का मानो पुनरुद्धार किया है। इसके लिये वह समस्त ब्रजभाषा-काव्य-प्रेमियों के धन्यवाद के पात्र हैं।

(३) आचार्य-श्रेष्ठ बाबू श्यामसुंदरदास के सर्वश्रेष्ठ शिष्य हिंदी के एकमात्र डी० लिट्०, हिंदी के उदीयमान लेखक और सुकाव्य-मर्मज्ञ डॉक्टर पीतांबरदत्तजी बड़थ्वाल, जिन्होंने प्राचीन हिंदी-साहित्य का विशेष रूप से अध्ययन किया है— 'दोहावली' पढ़कर यत्परो नास्ति आनंद हुआ। आप अपनी रचना को 'नीरस' कैसे कहते हैं? यदि ऐसी सरस रचना को नीरस कहा जाय, तो सरस रचनाओं की गिनती में कितनी आ पावेंगी? आपकी अनोखी सूझ-बूझ, ललित शब्द-साधना, चमत्कारी संबंध-गुंफन, सब सराहनीय हैं। आप सचमुच वाग्देवी के दुलारे लाल हैं। उसने काव्य-प्रणयन के भृगु-पंथ* को आपके लिये देहलीका पैड़ा बनाकर आपके

* भृगु-पंथ बदरीनारायण से आगे है, जिस पर चलना असंभव ही-सा है। संभवतः इस मार्ग से ही भृगु मुनि नारायण के दर्शन के लिये अपने आश्रम से उतरते होंगे।

भार्गवत्व की रक्षा की है। मैं राष्ट्रीय विषय ले आने-मात्र के लिये आपकी प्रशंसा नहीं करूँगा, बल्कि इस कारण कि राष्ट्रीय घटनाओं को भी आपने काव्य के साँचे में ढाल दिया है।

इस रूखे ज़माने में भी आपने पुरानी रसिकता के मुग्धकर दर्शन कराए हैं। इसमें संदेह ही नहीं कि आप इस युग के 'बिहारी' हैं। वह समय दूर नहीं जान पड़ता, जब 'बिहारीलाल' कहते ही हठात् दुलारेलाल भी मुँह से निकल पड़ेगा।

(४) काव्य-कल्पद्रुम के यशस्वी लेखक, धुरंधर काव्य-मर्मज्ञ, कविवर श्रीयुत कन्हैयालालजी पोद्दार—जब कि खड़ी बोली के मेघाच्छन्न, अंधकारावृत नभोमंडल में विरल नक्षत्र की भाँति ब्रजभाषा-काव्य लुप्तप्राय हो रहा है, ऐसे समय में दुलारे-दोहावली की भाव-पूर्ण, रमणीय, चित्ताकर्षक रचना वस्तुतः चंद्रोदय के समान है।

दुलारे-दोहावली की शैली ब्रजभाषा के प्राचीन दोहा-साहित्य के अनुरूप कोमल-कांत पदावली-युक्त, रस, भाव, ध्वनि-अलंकार आदि सभी काव्योचित पदार्थों से विभूषित हैं। कुछ दोहे तो बड़े ही चित्ताकर्षक हैं। वे तुलनात्मक आलोचना में महाकवि बिहारीलाल के दोहों की समकक्षता उपलब्ध कर सकते हैं।

निस्संदेह दुलारे-दोहावली अपनी अनेक विशेषताओं के कारण ब्रजभाषा-साहित्य में उच्च स्थान उपलब्ध करने योग्य है।

(५) हिंदी-संसार में व्याकरण के सबसे बड़े पंडित, व्याकरणाचार्य कविवर पं० कामताप्रसादजी गुरु—आपकी रचना प्रशंसनीय है। आपके रचे हुए दोहे पढ़ने से अनेक स्थानों में बिहारीलाल का स्मरण हो आता है... । कुछ दिनों में 'दुलारे-सतसई' तैयार होकर हिंदी-साहित्य का गौरव बढ़ाएगी।... आपकी दोहावली व्याकरण की भूलों से सर्वथा मुक्त है।

(६) विद्वद्वर स्वर्गीय रायबहादुर डॉक्टर हीरालालजी डी० लिट०—इसमें संदेह नहीं कि आपके दोहे बिहारी के दोहों से स्पर्धा करते हैं।

(७) हिंदी के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत सुधींद्रजी वर्मा एम्० ए०, एल्-एल्० बी०—वास्तव में बिहारी को मात देकर आपने अपना 'अभिनव-बिहारी' नाम सार्थक किया है। एक-एक दोहा पद-लालित्य, अर्थ-गौरव तथा रचना-सौष्ठव का उत्तम उदाहरण है। प्राचीन कवियों की मौलिक कविता-शैली पर आधुनिक विज्ञान, समाज-शास्त्र, राजनीति, देश-दशा तथा साहित्यिक आदर्श को लेकर आपने वर्तमान हिंदी-काव्य का जो पथ-प्रदर्शन किया है, उसके लिये हिंदी-साहित्य का आगामी युग आपका अत्यंत आभारी होगा। वास्तव में आपका स्थान इस युग में न केवल सर्वश्रेष्ठ पुस्तक-प्रकाशक, सफल संपादक तथा उत्तम कलाकार की दृष्टि से ही, अपितु एक युग-प्रवर्तक महाकवि की दृष्टि से भी सर्वोपरि रहेगा।

(८) सुप्रसिद्ध काव्य-मर्मज्ञ, 'नवरस' के यशस्वी लेखक, विद्वद्वर श्रीमान् गुलाबरायजी एम्० ए०—इस सांगोपांग, सचित्र, कला-कौशल-पूर्ण प्रकाशन के लिये आपको बधाई है। पुस्तक की भूमिका बड़ी पांडित्य-पूर्ण है। उसमें साहित्य-शास्त्र के प्रधान तत्त्वों तथा ब्रजभाषा के महत्त्व का बड़े सुंदर रूप में दिग्दर्शन कराया गया है।

भाव-गांभीर्य और अर्थ-व्यंजकता के लिये दोहे-जैसे छोटे छंद ने जो प्रसिद्धि पाई है, उसे आपने पूर्णतया स्थापित रक्खा है। आपने यद्यपि प्राचीन परंपरा का अनुकरण किया है, तथापि उसमें एक सुखद नवीनता उत्पन्न कर दी है। बाजी उपमाएँ कम-से-कम मेरे लिये बहुत नवीन और उपयुक्त प्रतीत होती हैं। आपने जो नई लगन की अमर-बेलि से उपमा दी है, वह बड़ी सुंदर है। अमरबेलि स्वयं बढ़ती है,

और जिसके आश्रय रहती है, उसे सुखा देती है। यही हाल प्रेम की लगन का है। वह स्वयं बढ़ती रहती है, किंतु जिसमें लगन पैदा होती है, वह सूखती या सूखता जाता है। अमरबेलि के जड़ नहीं होती है, प्रेम की भी कोई जड़ नहीं है, तब भी उसकी बेलि हरियाती है। कालों की बुराई तो सूरदासजी ने ख़ूब की है, और उन्होंने भ्रमर, कागज़ और काक, सबको एक चटसार के बतला दिया है—

सखी री ! स्याम कहा हित जानै ;

सूरदास सरबस जो दीजै, कारो कृतहि न मानै।

यद्यपि सूरदासजी के पद का लालित्य तथा उसकी मीठी कसक अनुकरण से परे है, तथापि आपने काले की कृतघ्नता का वैज्ञानिक कारण देकर उसमें एक नवीनता उत्पन्न कर दी है—

लै सबको उर-रंग सोखत, लौटावत नहीं ;

कपटी, कान्ह, त्रिभंग, कारे तुम तातैं भए।

कुछ साधे-सादे दोहे बहुत सुंदर लगते हैं—

पागल कौं सिच्छा कहा ? कायर कौं करवार ?

कहा अंध कौं आरसी ? त्यागी कौं घर-बार ?

* * *

मिलत न भोजन, नगन तन, मन मलीन, पथ बासु ;

निर्धनता साकार लखि ढारत करुना आँसु।

बड़ा सुंदर चित्र है। वर्तमान नृपतियों का भी आपने अच्छा चित्र खींचा है। अछूतोद्धार, गांधी-महिमा आदि सामयिक विषय भी हैं। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि आपकी काव्य-प्रतिभा दिन दूनी, रात चौगुनी बढ़ती रहे, और उसके द्वारा व्रजभाषा की बेलि लहलहाती रहे।

•

(६) सुप्रसिद्ध लेखक और कवि पं० लक्ष्मीधरजी वाजपेयी—आपके दोहों में काव्य के सर्वोत्कृष्ट गुण मौजूद हैं। मुक्तक

काव्य वर्तमान समय में बहुत ही कम हिंदी-कवियों ने लिखने का साहस किया है, और जिन लोगों ने लिखा है, उनमें आपकी रचना मुझे तो भाई, बहुत सुंदर जँची है। क्योंकि अन्य लोगों की रचना में ऐसे अर्थ-गांभीर्य, भाव-सौंदर्य और काव्यालंकार मुझे दिखाई नहीं दिए।...

आपके कई दोहे बिहारी से श्रेष्ठ ज़रूर उतरेंगे। और बिहारी के दोहों में जो कहीं-कहीं अश्लीलता का दोष लगाया जाता है, सो आपके दोहों में कहीं नहीं है। आपकी सुरुचि, प्रतिभा, विदग्धता, रचना-चातुरी और ब्रजभाषा पर आपका इतना अधिकार देखकर कौतूहल होता है।

हिं० सा० सम्मेलन के पद्य-संग्रह में आपकी दोहावली से कुछ दोहे मैं रखवा रहा हूँ।

(१०) पंजाब के प्रसिद्ध विद्वान्, स्त्री-शिक्षा के स्तंभ तथा कन्या-महाविद्यालय के संस्थापक स्वर्गीय लाला देवराज—मैं समझता था, अब ब्रजभाषा में वैसी रस-भरी रचना नहीं हो सकती, पर आपकी दोहावली को देखकर मैं कुछ और ही समझने लगा हूँ। क्या आपके रूप में बिहारी ने अवतार तो नहीं ले लिया? 'दुलारेलाल' और 'बिहारीलाल' नाम बहुत मिलते हैं। काम में भी सादृश्य है। नामों के अक्षर और मात्राएँ भी समान। आप बिहारी के आधुनिक संस्करण तो नहीं? दोहे सर्वथा अच्छे हैं। दोहावली क्या सतसई में परिणत होगी? हो!

(११) हिंदी की प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती अमृतलतास्नातिका, प्रभाकर—मैं 'दुलारे-दोहावली' को कितने दिनों से प्रशंसा सुनकर देखने को लालायित हो रही थी। मेरे अहोभाग्य हैं कि मुझे भी इस पुस्तिका का पीयूष पान करने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

इसके एक-एक पद्य में अलंकारों की झड़ी तथा ब्रजभाषा का सौष्ठव निहारकर श्रीभार्गवजी की अलौकिक कृति पर मन गद्‌गद हो जाता है। मैं तो समझ रही थी कि कवि बिहारीलाल के साथ ही ब्रजभाषा की कविता लुप्त हो गई। पर मेरा मनोभाव ही ग़लत निकला। दुलारे-दोहावली के ६६, ६७ नंबर के दोहे बिहारी से भी भावों में कहीं अधिक बढ़े-चढ़े हैं। मैं इस कविता-कानन के मधुकर की काव्य-कुशलता पर उन्हें हार्दिक बधाई देती हूँ।

(१२) **पंजाब के सर्वश्रेष्ठ लेखक श्रीयुत संतरामजी बी० ए०**—मित्र, आपने तो सचमुच कमाल कर दिया। मैं नहीं समझता था, आप ऐसे अच्छे दोहे लिख सकते हैं। मैं न तो कवि हूँ, और न काव्य-मर्मज्ञ, केवल मनोरंजन के लिये कभी-कभी कविता का रसास्वादन कर लिया करता हूँ। आपकी दोहावली पढ़कर मुझे बड़ा ही आनंद आया। कोई-कोई दोहा तो इतना अच्छा है कि पढ़ते ही अनायास 'वाह-वाह' निकल पड़ती है। पुराने कवियों के दोहों में जो-जो उत्तम गुण माने जाते हैं, वे सब आपके दोहों में मिलते हैं। अब यह कहना कठिन है कि केवल प्राचीन कवि ही अच्छे दोहे लिख गए हैं, नवीन कवि वैसे नहीं लिख सकते। मेरी स्त्री ने भी आपकी दोहावली को बहुत पसंद किया है।

(१३) **प्रोफ़ेसर दीनदयाल गुप्त एम्० ए०, एल-एल्० बी० (हिंदी-अध्यापक लखनऊ-विश्वविद्यालय)**—उक्ति-वैचित्र्य, व्यंग्य और कल्पना की उड़ान में अनेक दोहे यथार्थ में बिहारी के दोहों से बहस करते हैं। उनमें यथेष्ट माधुर्य है। उत्प्रेक्षा, रूपक, श्लेष, यमक, अनुप्रास आदि चमत्कार-पूर्ण सूक्तियों की छटा तो समस्त ग्रंथ में देखने को मिलती है।......कलात्मकता और दिल को ख़ुश करने की 'ख़्यालबाज़ी' में दोहावली का कवि कहीं-कहीं उर्दू के रँगीले शायरों

से भी बाज़ी मार रहा है। रसीले भावों के शब्द-चित्रों को देख तबियत फड़क उठती है, और दिल 'वाह-वाह!' कहकर कवि के मन-उदधि से उड़ी हुई 'भाव-भाप' में भीग जाता है। इस सराहनीय कृति के लिये श्रीदुलारेलालजी को बधाई है। आशा है, हिंदी-काव्य-मर्मज्ञ 'दोहावली' के भावों को समझकर उसका उचित आदर करेंगे।

(१४) **ओयल-नरेश श्रीमान् युवराज दत्तसिंह**—श्रीपं० दुलारेलालजी की अनुपम तथा सर्वश्रेष्ठ रचना 'दुलारे-दोहावली' को पढ़कर मुझे पहले तो विश्वास नहीं आया कि आधुनिक कवि भी ब्रजभाषा की ऐसी रचनाएँ कर सकते हैं। यह ब्रजभाषा की अत्यंत सुंदर रचना है। इतने मधुर भाव तथा ऐसे अच्छे अनुप्रास तो कदाचित् ही कहीं और मिलें।

(१५) **प्रसिद्ध उपन्यास और कहानी-लेखक पं० विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक'**—बिहारी के पश्चात् ब्रजभाषा में दोहे लिखने का यह आपका प्रयत्न बहुत सफल रहा। वैसे तो सभी दोहों में कुछ-न-कुछ अनोखापन है, परंतु कुछ दोहे तो वास्तव में बिहारी से भी बाज़ी मार ले गए हैं।

(१६) **प्रोफ़ेसर अयोध्यानाथजी शर्मा एम्० ए० (हिंदी)**—आपको इस युग का बिहारी कहना चाहिए। कहीं-कहीं पर तो आपके दोहे बिहारी के कुछ दोहों से भी श्रेष्ठ हो जाते हैं।

(१७) **विद्वद्वर प्रोफ़ेसर विद्याभास्करजी शुक्ल एम्० एस्-सी०, साहित्यरत्न, वनस्पति-विज्ञान-अध्यापक, नागपुर-विश्वविद्यालय**—दुलारे-दोहावली को आद्योपांत पढ़कर मैं यही कहूँगा कि यह अपने ढंग की एक अनोखी रचना है। दोहों की रोचकता, उनके चुभते हुए भाव और उनका सुंदर शब्द-विन्यास, उनकी पद-योजना तथा उनका प्रवाह देखकर तो कोई भी यह कह

उठेगा कि ये दोहे बिहारीजी के दोहों से कहीं अच्छे हैं, परंतु सबसे अनोखी बात जो मुझे इस रोचक रचना में पसंद आई, वह यह थी कि इसमें कितने दोहे ऐसे हैं, जिनमें उच्च कोटि के विज्ञान की झलक है। ये साइंटिफ़िक दोहे लेखक की विज्ञान की योग्यता पर झलक डालते हैं। मुझे तो आश्चर्य है कि इतनी थोड़ी अवस्था में ही एक श्रीदुलारेलालजी में कितनी बातें हैं! उच्च कोटि के संपादक, लेखक, गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस आदि के एकमात्र संचालक होते हुए भी एक धुरंधर कवि और उस पर भी विज्ञान की ऐसी योग्यता! मुझे तो इस रूप में साइंटिफ़िक रचनाएँ पहली ही बार हिंदी-संसार में दिखाई दी हैं। मैंने आपके कुछ अप्रकाशित दोहे भी सुने हैं, और कितनों में ही विज्ञान के विविध उच्च कोटि के विषयों का सार पाया है।

(१८) **हिंदी के सुप्रसिद्ध समालोचक, विद्वद्वर डॉक्टर हेमचंद्र जोशी**—आपकी दोहावली चमत्कार-पूर्ण है। इस समय, जब कि हिंदी-साहित्य के ऊपर रहस्य या छायावाद के घनघमंड बादल अपने अनर्थकारी अंधकार की छाया फैलाकर कविता-प्रसाद और रसवती वाक्यावली को लोप करने का सतत प्रयत्न कर रहे हैं, आपकी ब्रजभाषा की ललित, कांत पदावली रस की धार बहाने में समर्थ हुई है। यह देखकर मुझे हर्ष हुआ कि इस विषय पर हिंदी के साहित्यज्ञ एकमत हैं।

(१९) **विद्वद्वर प्रोफ़ेसर गोपालस्वरूप भार्गव एम्० एस्-सी०**—आपके अनेक दोहे, प्रायः वे सभी, जिनमें आपने वैज्ञानिक उपमाएँ दी हैं, और कुछ अन्य भी, ऐसे हैं कि बिहारी और मतिराम को मात करते हैं।

लै सबको उर-रंग, सोखत, लौटावत नहीं ;
कपटी, कान्ह, त्रिभंग, कारे तुम तातें भए ।

यह सोरठा वही लिख सकता है, जो प्रकाश-विज्ञान का मर्मज्ञ हो । इससे आगे का दोहा भी इसी प्रकार का है । नं० ६६ के दोहे में जो हीरे के गुणों की ओर इशारा किया है, वह भी साधारण साहित्य-कवि के लिये कठिन है । भूकंप और ज्वालामुखी का संबंध भी नं० ८८ के दोहे में बड़ी चतुराई से बताया है ।

नं० ८६ में रहट की, ८५ में कुरंड की, १०१ में ज्वार-भाटे की, ११८ में शून्य की, बिजली-घर (Electric Power House) की १२० में, annealing की १२४ में, २६ में चकमक और ईस्पात की, ३४ में वायुयान की, ६७ में अश्रुविंदु की, हीरे की ६८ में, आतिशी काँच की ८२ में जो उपमाएँ दी गई हैं, वे आपका वैज्ञानिक अनुभव पूर्णतया बतला रही हैं ।

शृंगार-रस के दोहों में भी आपने अद्वितीय प्रतिभा दिखाई है । देश-प्रेम, देशोद्धार, समाज-सुधार, राजनीति, वेदांत, भक्ति, वीर आदि रस तथा समकालीन इतिहास (Contemporary History) पर भी आपने अनुपम दोहे लिखे हैं ।

(२०) इंदौर में ब्रजभाषा के सबसे बड़े ज्ञाता प्रोफ़ेसर श्रीनिवासजी चतुर्वेदी एम्० ए० (संस्कृत-हिंदी-अध्यापक होलकर-कॉलेज, इंदौर)—आपने हिंदी-भाषा की जो सामयिक और वास्तविक सेवाएँ की हैं, वे सर्वथा अभिनंदनीय एवं सराहनीय हैं । गंगा-पुस्तकमाला तथा माधुरी व सुधा प्रचलित करके हिंदी-क्षेत्र में साहित्य-सेवियों, उत्तम रचनाओं, सुलेखकों को उत्तेजन देने का जो महत्त्व-पूर्ण एवं आदर्श कार्य किया है, वह हिंदी-प्रेमियों के लिये गौरव एवं आदर का विषय है । भाषा में साहित्यिक क्षेत्र निर्माण करने का सुयश आपको अवश्य प्राप्त हुआ है, वह

होना ही चाहिए था। आपकी ये अमूल्य सेवाएँ भाषा के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य हैं।

'दुलारे-दोहावली' तैयार करके आपने आदर्श कवित्व-कला-मर्मज्ञता तथा भाव-सरसता का पूर्ण परिचय दिया है।

इस युग में भी ब्रजभाषा की इतनी सुंदर और उत्कृष्ट रचना हो सकती है, यह देखकर मुझे परम प्रसन्नता होती है। निश्चय ही आपकी यह रचना ब्रजभाषा-काव्य का गौरव बढ़ानेवाली है। इसमें प्रायः सभी रसों का सुंदर समावेश किया गया है। लालित्य तथा प्रसाद-गुण प्रत्यक्ष प्रकट होते हैं। भावों की धारा नैसर्गिक रूप में प्रवाहित हो रही है। दोहा-सदृश छोटे-से छंद में गंभीर भावों का सुरुचि-पूर्ण दिग्दर्शन कराना कवि की प्रतिभा का प्रत्यक्ष प्रमाण है। कल्पनाएँ स्थान-स्थान पर अत्युत्तम तथा मनोमोहक हैं। इस उत्तम काव्य का अवलोकन करके बिहारी तथा सत्यनारायण की पुनीत स्मृति सहसा उपस्थित हो जाती है। भाषा पर आपका आधिपत्य देखकर परम हर्ष होता है।

३. हिंदी-कवियों की राय

(१) सबसे वृद्ध काव्य-मर्मज्ञ, छंद-शास्त्र के अद्वितीय विद्वान, कविश्रेष्ठ पं० जगन्नाथप्रसादजी 'भानु' लिखते हैं—

"कवि-सम्राट् श्रीदुलारेलाल भार्गव

सुहृद्वर,

'दुलारे-दोहावली' की प्रति मिली। अनेक धन्यवाद। पुस्तक पढ़कर चित्त अत्यंत प्रसन्न हो गया। इसके पहले भी मैं माधुरी या सुधा में प्रकाशित चित्रों के नीचे छपे आपके बनाए हुए दोहों को पढ़कर आपकी प्रशंसा किया करता था, और मित्रों से कहा करता था कि इन भाव-पूर्ण दोहों को पढ़कर बिहारी कवि का स्मरण हो

आता है। सचमुच में जैसे वह कोमल पर मार्मिक, ललित पर अनूठे, सरस और सजीव दोहों के लिखने में समर्थ और सिद्ध-हस्त थे, जान पड़ता है, वे ही सब बातें माता सरस्वती ने आपकी लेखनी में भी भर दी हैं। व्रजभाषा के वर्तमान काल के कवियों में ....सर्वश्रेष्ठ कवि मानता हूँ।

आपने यह बहुत अच्छा किया, जो इन सब दोहों को क्रमबद्ध करके उनका संग्रह, सचित्र और सजावट के साथ, प्रकाशित कर डाला। यह अब हिंदी-साहित्य की बहुमूल्य चीज़ हो गया है।"

(२) **महाकवि शंकरजी**—महाकवि पं० नाथूरामशंकरजी शर्मा ने, सन् १६२२ में, माधुरी में प्रकाशित दुलारे-दोहावली के प्रारंभिक और अपेक्षाकृत साधारण दोहों पर ही मुग्ध होकर बिना जाने ही कि ये श्रीदुलारेलाल के लिखे हैं, उन्हें लिखा था—"माधुरी बड़े टाट-बाट से निकली है। परमात्मा उसे उत्तरोत्तर उन्नति के उच्च शिखर पर चढ़ावे ....दोहा लाजवाब निकला है। दोहा के प्रणेता की सेवा में मेरा प्रणाम पहुँचे।......कविता है, तो यह है!"

नोट—सुप्रसिद्ध काव्य-मर्मज्ञ, संपादक-प्रवर, कविवर पं० हरिशंकर शर्मा का कथन यह है कि पूज्य पिताजी शंकरजी महाराज दुलारे-दोहावली के दोहों की सदा प्रशंसा करते रहते थे, और 'माधुरी' में प्रकाशित कुछ दोहों पर उन्होंने "बहुत ख़ूब" लिख रक्खा था!

(३) **महाकवि श्रीमैथिलीशरणजी गुप्त**—आज लोग भले ही उन पर टीका-टिप्पणी करें, परंतु हिंदी-काव्य के दोहा-साहित्य के इतिहास में प्राचीनों के साथ उनका भी एक विशेष स्थान होगा ही। एक मित्र के नाते उसके लिये मैं उन्हें सहर्ष बधाई देता हूँ।

(४) **महाकवि श्रीसियारामशरणजी गुप्त**—मुझे तो आपके

दोहे बहुत पसंद हैं। आपने ब्रजभाषा की महादेवी के कंठ में दोहा-वली का जो यह आभूषण पहनाया है, उसका सोना तो प्राचीन है, अतएव उसे खरा मानना ही पड़ेगा; किंतु उसमें निर्माण-रुचि की नवीनता भी यथेष्ट परिमाण में है। इस संबंध में आपको अपूर्व सफलता मिली है।

(५) **छायावाद के श्रेष्ठ महाकवि पं० सुमित्रानंदनजी पंत**—प्रायः प्रत्येक दोहा आपने मौलिक प्रतिभा, कोमल पद-विन्यास एवं काव्योचित भाव-विलास से सजाया है। शृंगार तथा प्रकृति-प्रधान दोहे मुझे अधिक पसंद हैं। तुलनात्मक दृष्टि से मध्यकालीन महारथियों की रचनाओं से वे होड़ लगाते हैं।

(६) **हिंदी-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ इतिहासकार, सुप्रसिद्ध समालोचक, विद्वद्वर रायबहादुर पं० शुकदेवविहारी मिश्र बी० ए०**—पं० सुमित्रानंदनजी पंत ने दुलारे-दोहावली के संबंध में जो कुछ लिखा है, उससे मैं अक्षरशः सहमत हूँ।

(७) **कवि-सम्राट् पं० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय 'हरिऔध'**—

काके दृग बिलसे नहीं लहे सु-मुकुता-हार,
देखि दुलारेलाल - कृत दोहावली - दुलार ?
बनी सरस दोहावली, बरसि सुधा-रस-धार,
कौन दुलारेलाल के दिल कौ लहै दुलार ?

(८) **कविवर प्रोफ़ेसर रामदास गौड़ एम्० ए०**—२००दोहों तक आँखें पहुँच गई। बढ़े चलिए। ७०० पूरे कीजिए। बड़े बाँके दोहे हैं। राजनीतिक दोहे महत्त्व के हैं। रचनाकाल के अंतःसाक्षी भी हैं। मुझे तो आपके कई अनुपम दोहे बिहारी से भी चोखे लगते हैं। आजकल के विषयों का समावेश करके आपने इन्हें समयानुकूल बना दिया है। रत्नाकरजी ऐसा नहीं कर सके।

(९) **सरस्वती-संपादक विद्वद्वर पं० देवीदत्तजी शुक्ल**—मैं ब्रजभाषा नहीं जानता, तो भी इसे पढ़ गया। कई दोहे बहुत सुंदर जान पड़े। १५, २७, २८, ३३, ३६, ५२, ६१, ६२, ७६, ७७, ८३ नंबर के दोहे मुझे अधिक पसंद आए। यदि आपके दोहे खड़ी बोली में होते, तो उनसे राष्ट्र-भाषा का निस्संदेह गौरव बढ़ता, तथापि सफल कविता-रचना के लिये आपको बधाई है।

(१०) **सरस्वती-संपादक कविवर ठाकुर श्रीनाथसिंहजी**—आपका 'स्मर-बाग़' दोहा बिहारी के दोहों से बाज़ी मार ले गया है! थोड़े शब्दों में बड़ी बात व्यक्त करने के लिये बिहारी प्रसिद्ध हैं। पर, जान पड़ता है, आप उनकी इस प्रसिद्धि पर चोट करेंगे।... मैं दोहों का विरोधी था..., पर आपके दोहों ने इस दिशा में भी मेरी रुचि उत्पन्न कर दी है।... मैं सप्रमाण सिद्ध कर सकता हूँ कि आपकी दोहावली बिहारी-सतसई से बाज़ी मार ले गई है।

(११) **कविश्रेष्ठ हितैषीजी**—आपने दोहे लिखकर वह कमाल दिखलाया कि मैं आश्चर्य-चकित रह गया। मैं स्पष्ट कहने में संकोच न करूँगा कि आपने बिहारी से लेकर अब तक के प्रायः सभी कवियों को पीछे छोड़ दिया। आचार्य द्विवेदीजी के सम्मान के हेतु हुए प्रयाग के द्विवेदी-मेला में राजा साहब कालाकाँकर के और मेरे अनुरोध पर तुरंत रचना करके तो आपने मुझे मुग्ध ही कर लिया था। तब मैंने ही नहीं, वरन् उपस्थित सहस्रों नर-नारियों ने मुक्त कंठ से आपकी अपूर्व कवित्व-शक्ति की प्रशंसा की थी। आपकी यह दोहावली वर्तमान काल में ब्रजभाषा की अद्वितीय वस्तु है।

१२) **आचार्य रामकुमार वर्मा एम्० ए०, हिंदी-विभाग, इलाहाबाद-युनिवर्सिटी**—मुझे यह कहने में कुछ भी संकोच नहीं

है कि दोहावली में कल्पना और अनुभूति का जितना सजीव चित्रण हुआ है, उतना आधुनिक ब्रजभाषा के किसी भी ग्रंथ में नहीं। यह आधुनिक ब्रजभाषा में सर्वोत्कृष्ट रचना है। विशेषता तो यह है कि इस दोहावली में ब्रजभाषा ने नवीन युग की भावना उतने ही सौंदर्य से प्रदर्शित की है, जितने सौंदर्य से राधाकृष्ण के शृंगार की भावना। इसमें संदेह नहीं कि आपकी यह कृति अमर रहेगी।......ब्रजभाषा में लिखनेवाले आधुनिक कवियों के लिये दुलारे-दोहावली आदर्श रचना होगी।

(१३) **कविवर श्रीयुत गुरुभक्तसिंहजी 'भक्त' बी० ए०, एल्-एल्० बी०**—खड़ी बोली के इस युग में ब्रजभाषा में कविता लिखकर आपने ब्रजभाषा के स्वर्णयुग के कवियों से सफलता-पूर्वक टक्कर ली है। आपके दोहे पद-लालित्य, अर्थ-गौरव, शब्द-सौष्ठव एवं माधुर्य में कहीं तो महाकवि बिहारीलाल के समकक्ष और कहीं बढ़कर ठहरते हैं। इस दोहावली को देखकर क्या अब भी कोई कह सकता है कि ब्रजभाषा Dead Language ही चली है।

सहज बिमल सित किरण-सी पदावली प्रतिएक—
बुध-विचार घन लहत ही प्रगटत रंग अनेक।
कण-से लघु यद्यपि लगैं दोहे सरस अखंड,
विश्लेषण के होत ही, प्रगटै शक्ति प्रचंड।

(१४) **कविवर 'बिस्मिल' इलाहाबादी—**

बिहारी-सतसई से कुछ नहीं कम—
दुलारेलाल की दोहावली भी।

(१५) **कविराज पं० गयाप्रसाद शास्त्री, राजवैद्य, साहित्याचार्य, आयुर्वेद-वाचस्पति, भिषग्रत्न 'श्रीहरि'—**

ऊख मैं, पियूख मैं न पाई सुर-रूखहू मैं
दाख की न साखन्यों सिताहू सकुचाई है ;
सीठी भई मीठी बर अधर-सुधा हू जहाँ,
मंद परी कंद की अमंद मधुराई है।
पीते रहे ही ते, पर रीते अनरीते रहे,
जानि न परै धौं यह कौन-सी मिठाई है ;
'श्रीहरि' अमोखी, चोखी, उक्ति-जुक्ति भाव-भरी,
कोई कल कामिनी कि कबि-कबिताई है।

(१६) ब्रजभाषा के प्रसिद्ध कवि श्रीश्यामनाथजी 'द्विज-श्याम'—

सुधुनि, सुलच्छन, गुन-भरे, भूषन-धरे, रसाल,
शत दोहा रचि सत सुयश लह्यो दुलारेलाल।

(१७) ब्रजभाषा के कविवर पं० उमाशंकर वाजपेई 'उमेश' एम्० ए०—! I am extremgly delighted with its freshness, strength, originality and in my opinion it is a work of permanent interest, wonderful power and marked genius. You have originated a new style of your own in Brija Bhasha and I consider you to be the Poet of the foremost rank.

(१८) कविवर श्रीलक्ष्मीशंकर मिश्र 'अरुण' बी० ए०—आधुनिक ब्रजभाषा की पुस्तकों में इस दोहावली का सर्वश्रेष्ठ स्थान है। सभी दोहे सुंदर और सुललित हैं। विषय-निर्वाह, पद-योजना, ध्वनि और अलंकार के लक्षणों से युक्त इस रचना का हिंदी-संसार यथेष्ट आदर करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। आपकी भाषा में सरसता है,

प्रवाह है, और एक अनठापन है, जो प्राचीन कवियों की रचनाओं में भी पूर्ण रूप से नहीं मिलता। बिहारी और मतिराम के दोहों से भी आपके कुछ दोहे, भाव और सरसता की दृष्टि से, बहुत बढ़ गए हैं। चमत्कार और मौलिकता आपकी रचनाओं का प्रधान गुण है! आशा है, आपकी दोहावली ब्रजभाषा-साहित्य के भांडार का एक अति उज्ज्वल रत्न बनेगी।

(१६) **ब्रजभाषा के कविश्रेष्ठ पं० शिवरत्नजी शुक्ल 'सिरस'**—रूपकालंकारादि से दोहे पूर्ण हैं। आपने बिहारी के साथ कविता की समानांतर रेखा खींची है। संकुचित स्थानों में, जहाँ कहीं आप बिहारी से मिलते देख पड़ते हैं, वहाँ भी आपने भिन्न भावांकन के साथ पृथक् ही रहने का अच्छा प्रयास किया है। आपके दोहों में भाव बढ़िया हैं, और वे अनुप्रास तथा यमक से जगमगा रहे हैं। दोहा की सकरी गली में साधारणतः सिकुड़कर चलना पड़ता है, पर वहाँ भी आपने कविता को भूषित वेश में निकाला है।

(२०) **कविवर पं० हरिशंकरजी शर्मा**—कितने ही दोहे तो बड़े ग़ज़ब के हैं। उनमें चमत्कार-पूर्ण प्रतिभा और कवित्वमय मौलिकता है। खड़ी बोली के आधुनिक युग में, ब्रजभाषा की ऐसी रुचिर रचना, वास्तव में, अभिनंदनीय है। दृढ़ विश्वास है कि विश्व-विश्रुत ब्रजमाधुरी आपको, इस सुधास्पंदिनी कोमल-कांत पदावली के लिये, अपना अमोघ आशीर्वाद प्रदान करेगी।

४. अँगरेज़ी-विद्वानों की राय

(१) **विद्वद्वर प्रोफ़ेसर जीवनशंकरजी याज्ञिक एम्० ए०, एल्-एल्० बी०, अँगरेज़ी अध्यापक काशी-विश्वविद्याय**—'दुलारे-दोहावली' एक अनोखी चीज़ है। कोई माई का लाल ब्रज-भाषा की क्षीण और उपेक्षित शक्ति को फिर से चमका देगा, ऐसी

आशा नहीं रह गई थी। श्रीभार्गवजी छिपे रुस्तम निकले। सफल संपादक से बढ़कर कवि निकले। और, वह भी ऐसे कि उनकी तुलना बिहारी से की जाती है! धन्य उनका सफल प्रयास और धन्य उनकी अमर कृति !!

भविष्य में इस युग का नाम 'दोहावली' से निश्चित हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। इस अनमोल हार को पाकर आज मातृभाषा गौरव को प्राप्त हो रही है।

'दोहावली' की चर्चा करते हुए हमें तो गीता का श्लोक याद आता है—

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन-
माश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः;
आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति
श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्।

इससे अधिक क्या कहा जाय, और जो कुछ भी कहा जाय, वह ऐसे रत्न की प्रशंसा में अत्युक्ति-दोष से दूषित नहीं हो सकता। बड़े सौभाग्य से अपने जीवन में ऐसी रत्नावली देखने को मिलती है।

(२) प्रोफ़ेसर अमरनाथ झा (प्रयाग-विश्वविद्यालय में अँगरेज़ी-विभाग के अध्यक्ष)—'दोहावली' पढ़कर चित्त बहुत प्रसन्न हुआ। बहुत दिनों पर ऐसी कविता पढ़ने का अवसर मिला। बिहारी ने दोहा को ऐसे उच्च शिखर पर पहुँचा दिया था कि कवियों को उनका अनुकरण दुःसाध्य मालूम होने लगा था। आपने 'दोहा-वली' लिखकर यह प्रमाणित कर दिया कि इस युग में भी, व्रजभाषा में, सभी प्रकार के भाव, सभी भाँति के विषय, गूढ़-से-गूढ़ तत्त्व, जटिल-से-जटिल समस्याएँ दोहा में सुचारु रूप से व्यक्त करने की योग्यता आपमें है।

पुस्तक जिस विलक्षण सजधज से निकली है, उसी ठाट की कविता भी है।

३) हिंदी के श्रेष्ठ कवि और आलोचक प्रोफ़ेसर शिवाधारजी पांडेय (अँगरेज़ी-अध्यापक प्रयाग-विश्वविद्यालय)— What I came across, however, was equal to anything of the type in our literature.

५. पत्र-पत्रिकाओं की राय

(१) हिंदी का सबसे अधिक उपकार करनेवाली संस्था दक्षिण-भारत-हिंदी-प्रचार-सभा का मुख-पत्र 'हिंदी-प्रचारक'— यह पुस्तक इस बात का प्रमाण है कि खड़ी बोली के इस युग में भी ब्रजभाषा का महत्त्व कम नहीं हुआ है। भाषा, भाव तथा कल्पना, सब दृष्टियों से इसके दोहे सर्वोत्कृष्ट कहे जा सकते हैं। कुछ दोहे तो ऐसे उतरे हैं कि उन्हें पढ़-पढ़कर भी जी नहीं भरता, और फिर पढ़ने की इच्छा होती है। कई दोहे तुलना में कवि बिहारीलाल के दोहों की टक्कर के हैं, इसमें ज़रा भी संदेह नहीं।

(२) हिंदी की सुप्रसिद्ध पत्रिका 'चाँद'—दोहावली के दोहे निस्संदेह बहुत अच्छे हैं। उनमें पद-लालित्य, अर्थ-चमत्कार, सूक्ष्म कल्पना, भाव-गंभीरता, रस और अलंकार, सभी कुछ मिलता है। इन दोहों की रचना करके कविवर श्रीदुलारेलालजी ने अपनी प्रखर एवं असाधारण कवित्व-प्रतिभा का परिचय दिया है। 'दुलारे-दोहावली' के पढ़ने में प्रायः वही आनंद मिलता है, जो 'बिहारी-सतसई' के पाठकों को प्राप्त होता है। 'दोहावली' एक मुक्तककाव्य है। बहुत-से दोहे शृंगार-रस-पूर्ण होते हुए भी अश्लीलता के दोष से सर्वथा मुक्त हैं। शृंगारात्मक दोहों के अतिरिक्त, प्रस्तुत

काव्य-ग्रंथ में धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय विषयों के आधार पर रचे हुए कुछ दोहे भी वर्तमान हैं।

इस प्रकार के उत्कृष्ट दोहे पुस्तक में भरे पड़े हैं। रूपक-अलंकार का आश्रय लेकर कवि ने विविध विषयों का वर्णन बड़े चित्ताकर्षक ढंग से किया है। ब्रजभाषा का अवलंबन कर आधुनिक काल में इस प्रकार की सरलता एवं ललित रचना करके कविवर श्रीदुलारेलालजी ने वास्तव में बड़े कमाल का काम किया है।

कुछ चुने हुए काव्य-ग्रंथ

परिमल	'निराला'	४)
चंद्र-किरण	डॉ० रामकुमार वर्मा	१)
कुल ललना	,,	१॥)
जय हिंद	शिवसिंह 'सरोज'	।)
रक्त-रंजित काश्मीर	,,	॥)
विप्लव और विहार	,,	२)
पंछी	गोपालसिंह नेपाली	१)
रागिनी	,,	१)
चिरस्पर्श	केदारनाथ	१॥)
राष्ट्रीय गायन	ज्योतिलाल भार्गव	।=)
शारदीया	दिनेशनंदिनी डालमिया	१॥)